‘धन धन श्री गुरू तेग बहादर।’
‘सगल सृष्ट पे ढाकी चादर।’

नौवें सतगुरू
धन श्री गुरू तेग बहादर साहिब
का 350 वर्षीय शहीदी दिवस,
इस वर्ष 25 नवम्बर 2025 को आ रहा है।
इस महान गुरू साहिब जी की
महान शहादत को
इस पुस्तक के माध्यम से श्रद्धा के
फूल भेंट कर रहे हैं।
यह पुस्तक हमारे मार्गदर्शक
‘सिंघ साहिब जी’
की ओर से बच्चों के गुरमत मुकाबलों के लिए
छपाई जाने वाली पुस्तक माला का
एक अनमोल मोती है,
जो उनके शारीरिक रूप से बिछुड़ने के बाद
उन को समर्पित है।

(सिंघणी जी)

कलकता के विक्टोरिया अजायब घर में रखी
श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी की इतिहासिक पेंटिंग
जिस का चेहरा गुरु साहिब जी ने आप पेंट किया

'इतिहास के झरोखे से

इस धरती के ऊपर पसरे अज्ञानता के अंधेरे को (कूड़ की पाल) को दूर करने के लिए गुरू नानक साहिब जी ने इस संसार में प्रकाश धारा। 1469 ईसवी से 1539 ईसवी तक उन्हों ने सच्च का चन्द्रमा बन कर जगत को प्रकाश मान किया और वहमों भरमों की फैली धुंध को खत्म करने और पृथ्वी पर रहने वाले लोगों को सुधारने के लिए इस संसार में लगभग 28 हज़ार किलो मीटर की पैदल यात्रा की। भाई गुरदास जी अपनी पहली वार की 24वीं पौड़ी में लिखते हैं:

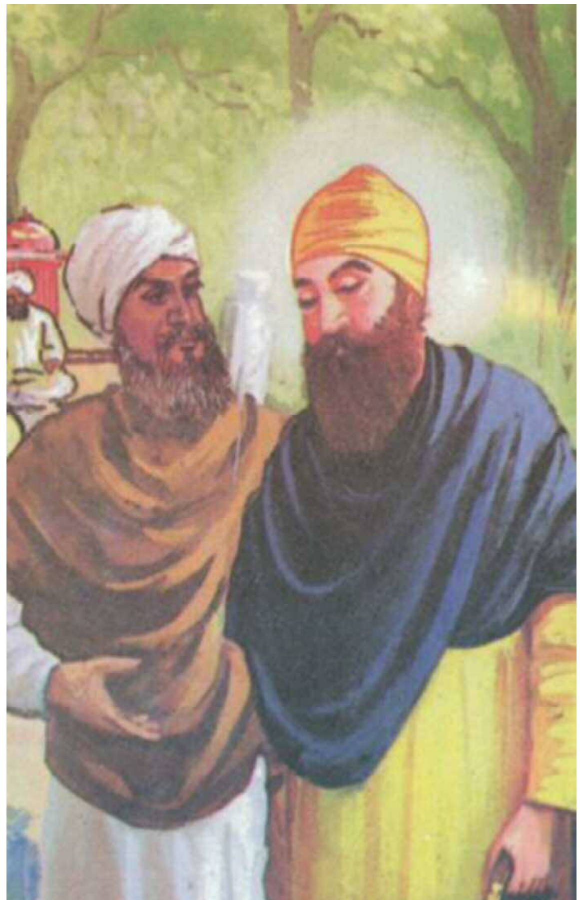

बाबा देखै ध्यान धर,
जलती सभ पृथ्वी दिस आई।
बाझहु गुरू गुबार है,
है है करदी सुणी लोकाई।
बाबे भेख बणाइआ,
उदासी दी रीत चलाई।
चढ़िहआ सोधण धरत लोकाई।

उनकी इस यात्रा दौरान दूर दूर तक 'नानक नाम लेवा संगत' बन गई। अपने मिशन को पूरा करने के लिए उन्होंने अपनी जोत बाबा लहणा जी में टिका कर उनको सिखों के दूसरे गुरू अंगद देव बना कर स्वयं उनके चरणों पर माथा टेक दिया। भाई बलवंड जी की वार की पंक्ति ''जोत ओहा जुगति साइ सहि काया फेरि पलटीऐ।'' अनुसार गुरू नानक साहिब जी की जोत गुरू अमर दास और गुरू रामदास जी में प्रकट हुई और वह गुरू पदवी पर बिराजे। गुरू अमर दास जी ने मंजी प्रथा द्वारा और गुरू राम दास जी ने मसन्द प्रथा द्वारा सारी संगत के साथ मेल जोल बनाया हुआ था। बाद में सिखों की कमांड पंचम पिता गुरू अरजन देव जी के पास पहुँच चुकी थी। इस समय दौरान उन्हों ने हर उस झूठ, पाखंड और अत्याचार के साथ टक्कर ली, जिस को चाहे ब्राह्मणों ने फैलाया, चाहे मौलवियों ने, चाहे

जोगीओं ने या सरवरियों ने। वह किसी राजसी ताकत की आड़ में होने वाले कामों के सख्त विरुद्ध थे। गुरू साहिब जी के मिशन अनुसार यह सब कुछ कूड़ की पाल (झूठ की दीवार) का ही एक रूप था।

लोधी खानदान के बाद बाबर और अकबर के माध्यम से राजसी ताकत अब जहांगीर के पास आ गई थी। उसने अकबर के चलाये न्याय और धर्म निरपेक्ष राज्य के सिद्धांत अब बदल लिए थे। जहांगीर कानों का कच्चा था। गुरू साहिब जी का सच्चाई वाला पक्ष उस को अच्छा नहीं लगता था। उसके वज़ीरों और सलाहकारों ने उसको बताया कि सिखी अब केवल गोईंदवाल तक सीमित नहीं रही। केवल हिंदू ही उनके सेवक नहीं। अब कई मुसलमान भी ना केवल उन के दरबार में जाते हैं, बल्कि कई पीर भी उन को सिजदा करने के लिए पहुँच जाते हैं। जहांगीर ने खुद यह बात कबूल की कि गुरू अरजन को ऐसे प्रचार की आज्ञा नहीं दे सकता कि भारतीए जनता, हिन्दू और मुसलमान उसके सच्च के मार्ग पर चलें। वह बहुत देर से यह सोच रहा था कि इस झूठ की दुकान को बन्द कर दिया जाए। इस मुख्य कारण और चन्दू द्वारा कही कुछ अन्य बातों को बहाना बना कर गुरू अरजन देव जी को 30 मई 1606 ईसवी में शहीद कर दिया गया।

अब समय आ गया था, जब धार्मिक और राजसी शक्ति को एकत्रित किया जा सके। 11 जून 1606 ईसवी को गुरू हरगोबिन्द साहिब जी गुरू–गद्धी पर सुशोभित हुए। बाबा बुड्ढा जी ने उनको गुर–गद्दी का तिलक लगाया। मीरी और पीरी की दो तलवारें पहनाई। गुरू साहिब जी ने दिल्ली के तख्त से भी ऊँचा तख्त स्थापित किया, जिस को अकाल का तख्त कहा गया। इस तख्त को बनाने के समय पहली ईंट गुरू साहिब जी ने खुद रखी। अकाल के इस तख्त की सेवा भाई गुरदास जी और बाबा बुड्ढा जी ने उनके साथ मिल कर संपूर्ण की। अकाल तख्त राजसी शक्ति का प्रतीक है। हमारा इतिहास इस महान घटना की गवाही भरता है कि किसी राज मिस्त्री या और किसी सिख से इस तख्त के निर्माण के समय कोई सहायता नहीं ली गई। गुरू साहिब जी ने सभी और यह हुकमनामें भिजवाए कि गुरू दरबार में बढ़िया किस्म के हथियार, घोड़े और जवानी भेंट की जाए। जवान अपने आप को सेवा के लिए हाज़िर करें जो कि ज़रूरत के समय गुरू साहिब जी के हुक्म अनुसार अपनी जान निछावर कर सकें। सिख संगत में जोश भरने के लिए ढाडी वारें गायन करने की प्रथा आरम्भ की गई।

जब यह सभी खबरें शहनशाह जहांगीर के पास पहुँची तब गुरू हरगोबिंद साहिब जी को ग्वालियर के किले में कैद कर दिया गया। गुरू साहिब जी को इस किले में लगभग 3 साल रखा गया। बाबा बुड्ढा जी ने इस के विरोध में गांवों और नगरों मे प्रचार करके श्री अमृतसर से ग्वालियर तक

चौंकी निकालनी शुरू कर दी। इस वजह से गुरू साहिब जी का यश पहले से भी अधिक फैल गया। जहांगीर इस से और ज़्यादा परेशान हो गया। रात के समय बुरे बुरे सपने आने लग गये। उस की पत्नी नूर जहां मीआं मीर जी की श्रद्धालु थी। उनसे उस ने गुरू धर की महिमा सुनी हुई थी। वह समझ गई कि 'खुदा–रूप' गुरू जी को बंदी खाने में रखने के कारण वह परेशान है। उस ने मीआं मीर जी को बुला कर जहांगीर को समझाया। बंसावली नामें में लिखा है:

''नूर जहां बेगम खावंद से कहा ऐसे। फकीर जात है सांई की सांई जैसे।
कैद नहीं करिए कहे कहाए। फकीर की मारी कोई न हटाए।''

गुरू साहिब जी को 52 राजाओं सहित ना केवल रिहा करना पड़ा, बल्कि जहांगीर ने गुरू साहिब जी से माफी भी मांगी। इस तरह उस का गुरू घर के साथ व्यवहार मित्रता वाला हो गया। तकरीबन 12 साल जहांगीर की मौत तक माहौल अमन चैन वाला बना रहा। जिस कारण गुरू साहिब जी सिखी के प्रचार की ओर ध्यान दे सके।

****

बाणी श्री गुरू तेग बहादर जी की

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में श्री गुरू तेग बहादर जी के
59 शब्द और एक दोहरे समेत 57 सलोक दर्ज हैं।
गुरू साहिब जी ने यह बाणी
15 रागों में उचारी हैं
14 राग उनसे पहले हुए गुरू साहिबान जी ने भी गाये हुए थे।
एक राग केवल श्री गुरू तेग बहादर जी ने गायन किया।
यह राग जैजैवन्ती है। इस राग में उनके 4 शब्द हैं।
गउड़ी राग में 9, आसा राग में 1, देवगंधारी राग में 3,
राग बिहागड़ा में 1, राग सोरठ में 12, धनासरी राग में 4,
जैतसरी राग में 3, राग टोडी में 1,
तिलंग, बिलावल, रामकली और मारू राग में 3–3,
बसंत राग में 5 और सारंग राग मे 4 शब्द हैं।

****

'प्रकाश श्री गुरू तेग बहादर जी

1 अप्रैल 1621 ईसवी का सूर्य भारत वासिओं और गुरू नानक नाम लेवा संगतों के लिए एक नई किरण ले कर चढ़ा। देसी साल अनुसार यह संवत 1677 के बैसाख महीने की 5 वदी बनती है। इस विशेष दिन श्री अमृतसर में 'गुरू के महल' में मीरी पीरी के मालिक श्री गुरू हरगोबिंद साहिब जी के गृह में माता नानकी जी की कोख से अमृत वेले एक बालक का प्रकाश हुआ। इस समय गुरू साहिब जी दरबार साहिब में श्री आसा की वार का कीर्तन श्रवण कर रहे थे। किसी सिख ने इस के बारे में बाबा बुड्ढा जी को बताया, जिन्होंने गुरू साहिब जी के पास जा कर यह खुशखबरी सुनाई। गुरू साहिब जी ने दरबार साहिब में सुशोभित पोथी साहिब को हाथ जोड़ कर शीश झुका कर शुकराना किया। (श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को उस समय पोथी साहिब कहा जाता था, क्योंकि पोथी साहिब को गुरू पदवी दशम पातशाह जी ने नांदेड़ में 1708 ईसवी को दी थी।)

श्री आसा की वार के कीर्तन की समाप्ति के बाद गुरू साहिब जी कुछ मुखी सिखों को साथ ले कर गुरू के महल पहुँचे। गुरू साहिब जी ने बालक को अपनी गोदी में उठा कर पहले शीश झुकाया, फिर माथा चूँमा। इस के बाद बालक के चरणों पर माथा टेका। ब्रह्मज्ञानी बाबा बुड्ढा जी यह सब कुछ देख रहे थे, उन्हों ने आंखें बन्द कर ली, मानो भविष्य को देख रहे हों। पर भाई बिधी चन्द जी ने गुरू साहिब जी से पूछ ही लिया कि बालक के पैरों के साथ माथा छुहाने का क्या कारण है? गुरू साहिब जी ने कहा,''हमारा यह पुत्र बहुत बली, शूरवीर और तेग का धनी होगा। इस का नाम हम तेग बहादर रखते हैं।'' एक विद्वान ने इस के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा कि गुर–गद्दी की रस्म के समय जिस भी गुरू साहिब जी ने जोत अपने से अगले गुरू साहिब में टिकाई तब फिर उन्होंने सब से पहले चरणों पर

नमस्कार किया, पर अर्न्तयामी छटे गुरू नानक साहिब यह जानते थे कि नौवें गुरू नानक साहिब को गुर–गद्दी की रस्म के समय आठवें गुरू नानक साहिब भाव गुरू हरिकृशन साहिब जी वहां मौजूद नहीं होंगे, इस लिए गुरू साहिब जी ने आज ही चरणों में नमस्कार कर दी क्योंकि जोत तो वही है।

बाबा बुड्ढा जी ने आशीर्वाद देते हुए यह वचन कहे, ''यह मेरे धन्य भाग हैं कि मैं इस साहिबज़ादे के दर्शन करने के लिए ही लम्बी उम्र भोग रहा हूँ। यह बालक सच्चा राखा बन कर जीवन व्यतीत करते हुए अपना बलिदान दे देगा।'' इस से पहले उनके घर चार पुत्र – बाबा गुरदिता जी, बाबा अणी राये जी, बाबा सूरज मल जी, बाबा अटल जी थे। एक बेटी थी, जिस का नाम बीबी वीरो जी था। बड़ी बहन वीरो छोटे भाई को बहुत लाड लडाती। सारे भाई भी उसको बहुत प्यार करते थे। कोई भाई आता जाता उसका मुँह चूम जाता। कोई लाड से मुँह पर चपात मार जाता। बहन वीरो उनकी इन्हीं हरकतों से चिड़ कर माता नानकी जी को शिकायत लगाने चली जाती। माता जी उन सब को प्यार से डांट देते और वीरो को भी कहते कि कोई बात नहीं बच्चिये; यह भी उसे प्यार ही करते हैं।

****

श्री गुरू तेग बहादर जी की शहादत के प्रभाव

शहादत के बाद श्री गुरू गोबिन्द सिंघ साहिब जी के बचन हैं:

''है है सब जग भयो जै जै सुर लोक।।''

अनुसार सारे जगत ने तो हाए हाए की पर दवताओं ने जय जय कार की। एक मुसलमान दरवेश ने श्री गुरू तेग बहादर साहिब के पावन शरीर को देखा, तो ऊँची ऊँची पुकार कर कहा, ''सुलतान ने अच्छा नहीं किया। अब बगावत का ऐसा तूफान उठेगा जो सारी दिल्ली को अपनी लपेट में ले लेगा और दिल्ली को उजाड़ देगा। एक दूसरे फकीर ने कहा,'जल्दी ही अल्लाह पाक के हुक्म से इस धरती पर बड़ी आफतें और दुर्घटनाएँ सब के सामने होंगी।

इसी तरह हुआ। मुख्य काज़ी अबदुल वहाब वोहरा, जिस ने फतवा सुनाया था, 15 दिन के बाद ही मर गया। चांदनी चौंक का कोतवाल अबदुला असतीफा दे कर आनंदपुर आ गया और वेश बदल कर वहीं पर पछतावा करता रहा। औरंगज़ेब जब दिल्ली वापिस आया तो वह पहले जैसा नहीं रहा। वह रात को सोया सोया बोलता और डर कर उठ जाता। एक दिन उसकी स्वारी चांदनी चौंक से जा रही थी। एक आदमी ने एक डंडा ज़ोर से उसकी और फैंका। पहरेदार पकड़ने लगे पर औरंगज़ेब ने रोक दिया। इस के दो दिन बाद ही जब वह घोड़े पर स्वार हो कर जा रहा था, तो एक आदमी ने तलवार के साथ हमला कर दिया,

(इस से आगे पढ़ो पन्ना 22)

‘बाल अवस्था और विद्या पढ़ाई’’

बचपन में (गुरू) तेग बहादर साहिब ज्यादातर चुप ही रहते थे। भाई गुरदास जी की 12वीं वार की चौथी पौड़ी की दो पंक्तियां हैं: ‘‘हउ तिस घोल घुमाया थोड़ा सवै थोड़ा ही खावै।। गुरमुखि सोई सहजि समावै।।’’ यह पंक्तियां उन के स्वभाव के साथ मेल खाती थी। 4 साल की आयु तक वह उस समय किया जाने वाला पूरा नितनेम करने लग गये थे। दीवान में भी वह उस स्थान पर बैठते जहां गुरू साहिब जी की नज़र उन पर पड़ती रहे ताकि अगर वह किसी सेवा के लिए कहें, तो सब से पहले उन्हें ही कहें। दीवान के बाद भी प्रभु की याद में कई–कई घंटों तक समाधि लगा कर बैठे रहते थे। जब समाधि से उठते तो भी कोई बात ना करते। बच्चों के साथ भी कम ही खेलते। माता नानकी जी बालक की ऐसी अवस्था देख कर परेशान हो जाते थे। एक दिन माता नानकी जी ने मौका देख कर गुरू साहिब जी के साथ बात की कि तेग बहादर अन्य बच्चों की तरह खेलता नहीं, ना ही कोई बात करता है। इस तरह मस्त सा क्यों बैठा रहता है। गुरू हरगोबिंद साहिब जी ने उनको मुस्करा कर कहा,‘‘यह उस महान कार्य की तैयारी कर रहा है, जो इस ने बड़ा हो कर करना है। आप को और बताएं! इस बच्चे ने जन्म से ही ब्रह्म की पहचान की हुई है।

(गुरू) तेग बहादर जी जब थोड़े और बड़े हुए तो उन को पढ़ने के लिए बाबा बुड्ढा जी के पास भेजा गया। छटम पीर जी का विचार था कि छोटी उम्र से ही वह हाथ से करने वाली किरत को देखें और उसकी महतता को समझ सकें। पहली पट्टी बाबा बुड्ढा जी ने आप उनका हाथ पकड़ कर लिखवाई। 4 साल की मौलिक पढ़ाई और बाणी की संथ्या करवाने के बाद वह बुर्जुग होने के कारण गुरू हरगोबिन्द साहिब जी से आज्ञा ले कर अपने गांव रमदास चले गये। वेदों और शास्त्रों की अगली पढ़ाई भाई गुरदास जी ने करवाई।

यह बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी द्वारा दी गई शिक्षा का ही प्रभाव था कि महिमा प्रकाश के लिखारी को यह लिखना पड़ा कि (गुरू) तेग

बहादर साहिब जी ज्ञान के शिखर थे। हृदय में उनके गरीबी थी। कर्म उनके शाही थे। स्वभाव उनका शांत था। दानी स्वभाव के थे और धैर्य का तो कोई अन्त ही नहीं था। एकान्त उन को बहुत पसन्द था। जब कभी पिता गुरू जी के दर्शन करने जाते तो आंखें नीची कर लेते थे।

जब किसी ज़रूरत मंद या दीन दुखी को देखते तो उनकी जरूरत पूरी कर देते। एक बार घर से कीमती सामान ला कर एक ज़रूरत मंद को दे दिया। अभी 4 वर्ष के ही थे, तो बड़े भाई बाबा गुरदिता जी के विवाह के समय माता जी द्वारा तैयार की गई पोशाक और गहने बाहर खड़े एक नंगे बच्चे को पहना आये। माता जी के पूछने पर उन्हों ने कहा कि माता जी,मुझे तो आप और वस्त्र ले दोगे, उस बेचारे को किस ने ले कर देने हैं?

शस्त्र विद्या की सिखलाई, घोड़ सवारी की ज़िमेंवारी भाई जेठा जी और भाई बिधी चन्द जी को सौंपी गई। इन उस्तादों ने (गुरू) तेग बहादर जी की शक्सियत को ऐसा संवारा कि उनका कद अपने पिता जी की तरह बहुत लम्बा निकल रहा था। छाती चौड़ी और बाजू आम बाजुओं से लम्बी थी। आँखें बहुत बड़ी थी जो आम तौर पर लाल ही रहती थी। वह छलांग बहुत लम्बी मार लेते थे। अच्छी नस्ल के घोड़ों की बहुत पहचान थी। घोड़–स्वार तो कमाल के थे। लोहगढ़ किले के सामने मैदान में हर रोज़ फौजी अभ्यास होता था। बाकी साहिबज़ादों के साथ वह भी रोज़ाना अभ्यास और कसरतें करते।

जब (गुरू) तेग बहादर जी सात वर्ष के हुए तो लगातार ऐसा बीतता रहा कि वह और गहर गंभीर हो गये। 1627 ईसवी में उनके दादी माता गंगा जी का अकाल चलाणा हो गया। उनका अपनी दादी के साथ बहुत स्नेह था। उनके पास जा कर अक्सर ही गुरू अरजन देव जी की साखियों और शहादत के बारे में सुना करते थे। इस से डेढ महीने बाद बाबा अटल जी को इस संसार से खेल खेल में जाना पड़ गया। बाबा अटल राए जी (गुरू) तेग

बहादर साहिब जी से लगभग 2 साल उम्र में बढ़े थे। सहज और प्यार की मूर्ति बाबा अटल जी बहुत भक्ति करते थे। एक गुरू पुत्र दूसरा बाल उम्र की भक्ति से करामाती शक्तियां उनके पास आ रही थी। एक दिन यह अपने बराबर के बच्चों के साथ खेल रहे थे। खेलते हुए शाम का समय हो गया और अन्धेरा होना शुरू हो गया। आखिर में एक मित्र मोहन के सिर बारी रह गई। सभी बच्चों ने फैसला किया कि यह कल को अपनी बारी देगा। पर कुदरती ऐसी घटना घटी कि रात में सांप ने इस को डस लिया और वह मर गया। बाबा अटल जी ने कहा कि बारी ना देनी पड़े इस लिए बहानेबाज़ी करता है। चलो, उस को ले कर आते है। उस के घर जा कर एक छटी छुहा कर आवाज़ लगाई,''उठ मोहन, चल हमारी बारी दे।'' बस इतना कहने की देर थी कि वह उठ कर बैठ गया। सारे नगर में फैली यह बात गुरू साहिब जी तक पहुँच गई। वह बहुत नाराज़ हुए और मुख से बचन उचारे,''हमारे घर कौन सा भगवान पैदा हो गया जो हमें भी नहीं पता।'' बंसावली नामे में लिखा है:

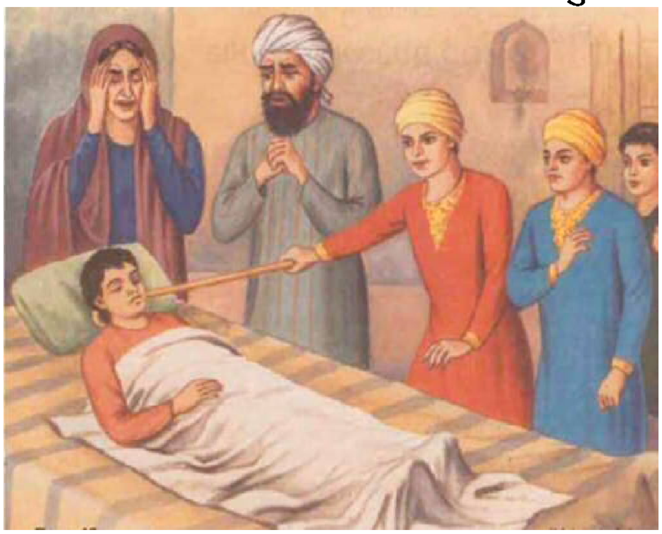

'गुरू हरगोबिन्द जी सदिया अटॅल राए। कहा, बुरा कीता जो मोड़ी रजाए।
रजाए सांई दी किसे नहीं मोड़ी। इह गॅल कीती बेटा तुसीं बहुत मंदेरी।'

यह बचन सुनते ही बाबा अटॅल राए जी ने संगत में हाज़िर हो कर गुरू साहिब जी से माफी मांगी और बाहर आ कर चादर तान कर लेट गये और प्राण चढ़ा लिए। गुरू साहिब जी ने उनका संस्कार अपने हाथों से किया। बाबा अटॅल राए जी के अकाल चलाणे के कुछ दिन बाद (गुरू) तेग बहादर साहिब जी के मासड़ भाई सांई दास जी डरोली गांव से गुरू साहिब जी के पास अफसोस करने के लिए आये। अन्य संगत भी अफसोस करने के लिए पहुँच रही थी। गुरू साहिब जी सब को तसल्ली दे रहे थे। 'हर्ष' और 'शोक' से न्यारे गुरू साहिब जी को सहज अवस्था में देख कर सांई दास जी ने पूछा:

'महाराज जी आप आज्ञा दो तो एक बात पूछना चाहता हूँ।'

गुरू साहिब जी ने कहा,'पूछ सांई दास'

भाई सांई दास जी बाले, 'महाराज जी, अपने पुत्र की मौत से भी आप को कोई गम क्यों नहीं हुआ?'

गुरू साहिब जी कहने लगे,'सांई दास, धरती पर एक लकीर खींच दे'
सांई दास ने अपनी उंगली से एक लकीर खींच दी।
गुरू साहिब जी ने कहा,'अब इस लकीर को मिटा दे।'
उन्होंने अपने हाथ से बनाई लकीर को मिटा दिया। अब गुरू साहिब जी ने पूछा,'साई दास, तुझे लकीर खींचने पर कोई खुशी हुई?'
सांई दास ने कहा,'मैंने तो आप का हुक्म मान कर लकीर खींच दी थी, इस में खुशी की तो कोई बात नहीं थी।'
गुरू साहिब जी बोले,'जब लकीर मिटाई, उस समय कोई अफसोस हुआ?'
सांई दास जी ने कहा,' नहीं महाराज'
अब गुरू साहिब जी ने स्पष्ट करते हुए कहा,'' सांई दास, बाबा अटॅल राए के रूप में उस अकाल पुरख ने इस धरती पर हमारे घर में एक लकीर खींची थी, जो उस के हुक्म से मिट गई है। अगर हम उस अकाल पुरख की आज्ञा में रहेंगे तो ना हमें आने की खुशी होगी और ना जाने का कोई ग़म होगा।

इस से पहले 1627 ई. में जहांगीर की भी मौत हो चुकी थी। उस की मौत के बाद शाहजहां दिल्ली के तख्त पर बैठा। उस ने मुस्लिम धर्म को छोड़ कर अन्य सभी धर्मों के लिए बहुत सख्त नीती अपनाई। हिन्दू धर्म के मन्दिर तोड़ कर मस्जिदें बनानी शुरू कर दी। लाहौर में गुरु अरजन देव जी द्वारा बनाई बाउली को भी मिट्टी से भर दिया। इस के साथ लगती लंगर की इमारत को ढेर कर दिया और मस्जिद का निर्माण कर दिया गया। इस का गुरू घर में रोस भी मनाया गया और विरोध भी किया गया। पर शहनशाह पर इस का कोई असर नहीं हुआ बल्कि वज़ीरों ने जब यह बताया कि कई मुसलमान भी गुरू हरगोबिन्द साहिब के श्रद्धालु हैं, तब उसने यह हुक्म जारी कर दिया कि किसी मुसलमान को किसी भी ग़ैर मज़हब में शामिल नही किया जा सकेगा। इस फुरमान का सब से अधिक असर तो सिख मत पर ही पड़ना था, पर इस हुक्म के बावजूद भी मुसलमान गुरू दरबार में हाज़िर होते रहे। इस का नतीजा यह निकला कि शाहजहां के मन में सिखों के प्रति नफरत और भी बढ़ गई। किसी ना किसी बहाने वह सिखों से टक्कर के बारे सोचने लगा।

यह बहाना लाहौर के गवर्नर कुलीज़ खान ने जल्दी ही ढूंढ कर शाहजहां के कान भर दिये। हुआ यूं कि गुरू साहिब जी के सिख लोहगढ़ के किले के बाहर मैदान में शस्त्र अभ्यास कर रहे थे। जोश बहुत था। किसी ने कह दिया कि चलो, आज जंगल में जा कर अभ्यास करते हैं। अमृतसर के पास गुमटाले की जूह में जानवरों के लिए घने पेड़ों की एक रख (जहां जानवरों और पक्षियों को रखा जाता था) बनी हुई थी। यह मुस्लिम हुकमरानों के शिकार खेलने के लिए और फौज के अभ्यास के लिए एक ठिकाना था। यहां कोई और नही आ सकता था। सिखों ने इस बात की परवाह नहीं की

और उस रॅख में अभ्यास करने चले गये। कुदरती कुछ दिनों से लाहौर से फौज की एक टुकड़ी वहां अभ्यास के लिए आई हुई थी। सिखों ने देखा कि एक बाज एक खरगोश को उठा कर ऊपर ले जाता है और उसे नीचे फैंक देता है। गुरू साहिब जी के सिखों को यह बात अच्छी नहीं लग रही थी। वह लगातार इसी तरह कर रहा था। खरगोश तड़प रहा था। ऐसा लगता था कि बाज को इसी के लिए ही तैयार किया गया था। सिखों ने अपना बाज छोड़ा। वह शाही बाज को झपट कर नीचे ले आया। सिखों ने उसे पकड़ लिया। कुछ समय बाद शाही फौजी भी उधर आ गये। सिखों को अपनी रखँ में देख कर भड़क गये और बुरा भला बोलने लगे। सिखों में जोश शिखर पर था। वह भी बोलने लगे। इस बहस का नतीजा यह निकला कि सिखों ने बाज वापिस करने से मना कर दिया। सिखों ने आ कर गुरू साहिब जी को सारी घटना के बारे में बताया। गुरू साहिब जी ने बाज की तरफ इशारा कर के कहा,'इस बाज की हरकतें देख कर खरगोश के लिए तुम्हारे मन में दया का भाव उपजा, यही बड़े गुरू नानक साहिब जी की सिखी का मूल सिद्धांत है। उन्होंने साथ ही यह भी कहा कि जहां बाज ने तुम्हें दया का पाठ पढ़ाया है, वहां यह बाज अब ''सिर तली'' पर रखने का सबक भी सिखाएगा। तुम तैयारी जारी रखो। सिखों में यह बात आम हो गई थी कि टक्कर तो अब हो कर रहेगी।

उधर मुखलिस खान के सलाहकारों ने उसको भड़काया कि आज बाज पर हाथ डाला है, कल को ताज पर भी हाथ डालेंगे। आपसी दुश्मनी और बढ़ रही थी। उधर कुलीज़ खान ने शाहजहां को बढ़ा चढ़ा बातें बताई और गुरू हरगोबिन्द साहिब जी के साथ युद्ध करने की आज्ञा ले ली। बाज का तो एक बहाना था। असली बात तो यह थी जो बंसावली नामा में लिखी है:

'बन्दा होयै कै सच्चा पातशाह अखवाए।
बन्दा होयै कै खुदाए कहाए।
तिस नूं मारना कुरान फुरमाए।'

17 मई 1628 ई. को गुरू हरगोबिन्द साहिब जी की पुत्री बीबी वीरो जी की शादी तय हुई थी। गुरू साहिब जी और परिवार शादी की तैयारी में जुटा हुआ था। 15 मई को कुछ सिखों ने आ कर गुरू साहिब जी को बताया कि मुखलिस खान 7 हज़ार फौज लेकर अमृतसर के पास पहुँच गया है। उन्हों ने कुछ सिखों को आगे हो कर रोकने के लिए भेज दिया। कुछ सिखों की डियूटी लगाई कि परिवार को चौधरी लंगाह जी की हवेली में झबाल गांव में छोड़ आओ। बारात को अमृतसर आने की बजाए झबाल आने का संदेशा भेज दिया। पिपली साहिब के नज़दीक शाही फौज के साथ सिखों की पहली झड़प हुई। भाई बिधी चन्द जी ने मोर्चा संभाल लिया। शाही फौज के दस्ते का इंर्चाज शमश खान आगे बढ़ता आ रहा था। एक सिख योद्धे भाई भाना जी ने यह देख कर उसकी ओर गोली चलाई जो उस के घोड़े को लगी और वह गिर गया। शमश खान उठ खड़ा हुआ। भाई भाना जी भी घोड़े से नीचे उतर आये। युद्ध में शमश खान का सिर भाई भाना जी की तेग के वार से कददू की भांति जा गिरा। शमश खान का सिर गिरते ही मुगल फौज ने भाई भाना जी को घेर कर शहीद कर दिया। गुरू साहिब जी के निष्काम सिख जत्थे के सामने मुखलिस खान के तनख्वाह दार फौजियों की कोई पेश नहीं चल रही थी। मुगल फौजी जान बचा कर लड़ रहे थे और सिख योद्धे जान लगा कर लड़ रहे थे। युद्ध में जीत तो जान वारने वालों की ही होती है। यह युद्ध तीन दिनों तक चला और इतना ज़बरदस्त था कि दोनो पक्षों का बहुत जानी और माली नुकसान हूआ। इस लिए मुखलिस खान ने गुरू साहिब जी को एक चिट्ठी लिख कर भेजी, जिस में लिखा था,'फकीर हो कर तुम्हें लड़ाई करनी शोभा नहीं देती। भलाई इसी में है कि अब पछतावा कर लो और आगे लिए बच कर चलो।' गुरू साहिब जी ने भी चिट्ठी लिख कर भिजवा दी,''हम अपने फकीर होने के बारे में जानते हैं, हम ने किसी स्थान पर कब्जा नही करना पर किसी को अपनी और अपने सिखों की इज्जत के साथ खिलवाड़ करते हुए भी नहीं देखना। मुखलिस खान तो अपनी हार मान ही चुका था। पर उसने एक आखिरी दाव खेला और गुरू साहिब जी को चुनौती दी! गुरू हरगोबिन्द, आओ– दोनो पक्षों के जवान ना मरवाएं, हम दोनों युद्ध करते हैं। 'वड योद्धे' गुरू साहिब जी ने सिखों और मुगल सिपाहिओं पर उपकार करके उसके साथ युद्ध करने की चुनौती को स्वीकार किया। उस समय के जंग के नियम अनुसार फौजें पीछे हट गई। मुखलिस खान और गुरू साहिब जी मैदान में आकर डट गये। इस से पहले कि मुखलिस खान कोई पैंतरा अपनाता, गुरू साहिब जी ने पहले ही तीर के साथ उसके घोड़े को गिरा दिया। जितने समय में वह संभला, गुरू साहिब जी बहुत ही फुर्ति से घोड़े से उतर कर उसके सामने आ चुके थे। परोपकारी योद्धे गुरू साहिब जी ने उसे एक और मौका देते हुए उसको वार करने के लिए कहा। मुखलिस खान के पहले वार को

गुरू साहिब जी ने पैंतरा बदल कर बचा लिया। मुस्करा कर गुरू साहिब जी ने कहा,'एक और'। उसके अगले वार को अपनी ढाल से रोक लिया और अगले वार का इशारा किया। जब तक मुखलिस खान की तलवार और वार करने के लिए ऊपर उठी, गुरू साहिब जी का खंडा उसकी ढाल को चीर कर सिर में से निकलते हुए उसके शरीर के 2 टुकड़े कर गया और उसकी आत्मा सदा के लिए जंजालों से मुक्त हो गई। इस युद्ध में गुरू साहिब जी की जीत हुई। प्रिंसीपल सतबीर सिंघ जी लिखते हैं,"दो बातें इस युद्ध में पहली बार हुई, पहली – राजाओं और रिआसतों में युद्ध होते देखे–सुने थे। यह पहली लड़ाई थी जो किसी शाही फौज की आम जनता के साथ हुई। दूसरी – सिखों के – युद्ध में शहीद होने वाले पहले सिख शहीद भाई भाना जी थे। (यह भाई भाना जी बाबा बुड्ढा जी के सपुत्र नहीं बल्कि गुरू हरगोबिन्द साहिब जी के योद्धा सिख थे) इस के इलावा भी 2 नई बातें और थीः पहली – यह मुगल फौज की सिखों के गुरू साहिब जी के साथ पहली एलानिया जंग थी। दूसरी – गुरू साहिब जी ने एक सिख कारीगर को सूखे पेड़ के तने की तोप बनाने का हुक्म दिया, जिस में से बारूद के स्थान पर लोहगढ़ किले में से मोटे मोटे पत्थर बरसा कर शाही सेना को किले के अन्दर दाखिल होने से रोके रखा। इस युद्ध में गुरू साहिब जी के भाई भाना जी के इलावा 13 योद्धे शहीद हुए, जिन का संस्कार गुरू साहिब जी ने अपने हाथों से किया। इस स्थान पर अब गुरूद्वारा संगराणा साहिब बना हुआ है। इस युद्ध के समय श्री (गुरू) तेग बहादर साहिब जी की उम्र केवल 7 वर्ष की थी। उन्हों ने सारा कुछ किले में बैठ कर अपनी आंखों से देखा और कानों से सुना।

पहर रात रहते गुरू हरगोबिन्द साहिब जी और (गुरू) तेग बहादर साहिब झबाल पहुँचे। बारात दिन में ही पहुँच चुकी थी। अमृत वेले बीबी वीरो जी का आन्नद कारज गुरू साहिब जी ने करवाया। यह सारा कार्य गुरू साहिब जी के सेवक चौधरी लंगाह की हवेली में सम्पूर्ण हुआ। दिन चढ़ने पर डोली भेज दी गई। विदाई के बाद गुरू साहिब जी परिवार सहित गोईंदवाल साहिब शुकराना करने चले गये। कुछ दिनों बाद वह फिर झबाल आ गये और 1629 ई. के अगस्त महीने तक झबाल में ही रहे।

इस के इलावा मुगल शाही फौज ने गुरू साहिब जी के साथ तीन और युद्ध किए। दूसरी जंग जालंधर 1629 ई., तीसरी महराज 1631ई. में हुई। यह सभी जंग गुरू साहिब जी ने अकाल पुरख जी की कृपा से जीते।

****

(गुरू) तेग बहादर साहिब जी की शादी

महराज के युद्ध के बाद गुरू हरगोबिन्द साहिब जी करतार पुर आ गये। यह नगर उन के पिता गुरू अरजन देव जी द्वारा बसाया गया था। उन्होंने अपने परिवार को भी यहीं बुला लिया। यहां गुरू घर के एक सिख भाई लाल चन्द जी का परिवार रहता था। एक दिन उसने गुरू साहिब जी के पास जा कर विनती की कि हमारा परिवार आप जी के परिवार के साथ रिश्ता जोड़ने लायक तो नहीं है, पर आप जी गरीब निवाज हो। मेरा और मेरी पत्नी बिशन कौर का यह विचार है कि आप जी हमारी पुत्री का रिश्ता बेटे तेग बहादर के लिए प्रवान कर लें।

गुरू साहिब जी ने भाई लाल चन्द की नम्रता और घर में गुरसिखी वाला माहौल देखते हुये प्रसन्नता से (माता) गुजरी जी का रिश्ता प्रवान कर लिया।

मार्च 1632 ई. को (गुरू) तेग बहादर साहिब जी की बारात गुरू के महल श्री अमृतसर से करतार पुर पहुँची। भाई लाल चन्द जी के परिवार ने बारात का बहुत मान सत्कार किया और बहुत सेवा की। आन्नद कारज की रस्म बाबा बुड्ढा जी के सपुत्र भाई भाना जी ने सर्म्पूण करवाई। करतार पुर का माहौल बहुत प्रसन्नता भरपूर था। सारी संगत गुरू साहिब जी को बधाई दे रही थी।

विदायगी के समय माता जी ने ससुराल परिवार की आज्ञा मानने और सेवा करने की शिक्षा दी। भाई लाल चन्द जी ने बच्ची को गुरबाणी का नितनेम करने की शिक्षा दी। उन्हों ने गुरू साहिब जी से कहा कि हम ना ही आप जी की सेवा कर सके और ना ही कुछ दे सके हैं। तब गुरू साहिब जी ने कहाः 'जिन तनुजा अरपन कीनग।

तिन पाछै क्या रख लीनग।'

विवाह के बाद गुरू साहिब जी परिवार सहित करतार पुर में ही रहे।

****

युद्ध करतारपुर का

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी के साथ चौथा युद्ध करतारपुर में 1634 ई. में हुआ। इस का कारण गुरू साहिब जी की अपनी फौज के सेनापति पैंदे खान बना। मज़े की बात तो यह कि इस यतीम बालक को पाला भी गुरू साहिब जी ने ही था।

घटना इस तरह हुईः गुरू साहिब जी ने 1634 ई. की बैसाखी करतारपुर में मनाने का फैसला किया। दूर–दूर तक संगतों को संदेशे भेजे गये। संगत बहुत संख्या में उमड़ पड़ी। काबुल की संगत की ओर से गुरू साहिब जी के लिए बहुत कीमती सौगातें आई। इस में से एक बहुत कीमती पोशाक पैंदे खान को देते हुए गुरू साहिब जी ने कहा कि गुरू दरबार में आते समय यह पोशाक पहन कर आया कर। इन भेटाओं में एक बाज भी था, जो उन्हों ने बाबा गुरदिता जी को दे दिया। वह पोशाक पैंदे खान के दामाद उसमान खान को पसन्द आ गई। उस ने एक दिन उड़ते हुए बाज को भी पकड़ लिया। पैंदे खान ने दरबार में आना ही बन्द कर दिया। संगतों की ओर से विनती करने पर गुरू साहिब जी ने बाज वापस मांग लिया पर पैंदे खान साफ मुकर गया।

इस बात को पैंदे खान ने अपना अपमान समझा और जालंधर के सूबेदार काले खान को भड़का कर गुरू साहिब जी के ऊपर हमला करवा दिया। यह जंग बाबा गुरदिता जी की अगवाही में लड़ी गई। पैंदे खान ने ललकारते हुए गुरू साहिब जी को कहा कि फौजों को एक तरफ करके हम दोनो युद्ध करते हैं। गुरू साहिब जी ने उसकी चुनौती स्वीकार कर ली। दोनों शूरवीर मैदान में आ गये। गुरू साहिब जी ने उस के द्वारा किये गये तीनों वार रोक लिए। तीसरे जोरदार वार को गुरू साहिब जी द्वारा रोकते समय उस की तलवार टूट गई। वह गुरू साहिब जी के घोड़े के नीचे जा घुसा। वह इतना ताकतवर था कि घोड़े सहित सवार को पटका कर मार सकता था। इस से पहले कि वह इस तरह करता, गुरू साहिब जी ने उस के सिर पर इतनी ज़ोर से ढाल मारी कि वह जख्मी हो कर धरती पर जा

गिरा। गुरू साहिब जी घोड़े से नीचे उतरे। जिस ढाल से उसको जख्मी किया था, उसी से उसके मुख पर छाया करते हुए उसको आखिरी कलमां पढ़ने को कहा। अब उसे अपनी भूल का अहसास हुआ और उस ने गुरू साहिब जी से माफी मांगी और कहा,'दाता, तेरी रहमत ही मेरा कलमा है। यह कहते ही उस ने आखिरी सांस लिया और वह सदा के लिए शांत हो गया।

करतारपुर की जंग में (गुरू) तेग बहादर जी भी मुगल फौजियों के साथ जूझ रहे थे। माता नानकी जी यह युद्ध छत पर खड़े हो कर देख रहे थे। कुछ समय बाद माता जी ने संदेशा भिजवाया कि अब मैदान से वापिस आ जाओ। (गुरू) तेग बहादर जी ने उसी सिख को यह कह कर वापिस भेज दिया कि माता जी को कह देना कि जब घमासान लड़ाई चल रही हो तो युद्ध के मैदान से वापिस आना कायरता की निशानी होती है। जिस जत्थे की वह अगवाही कर रहे थे, वह भी सारे हैरान थे कि 13 वर्ष का साहिबज़ादा एक भर जवानी वाले फौजी की तरह जूझ रहा है। उन के द्वारा दिखाए तेग के जौहर को देख कर 'दल भंजन' गुरू साहिब जी ने कहा,'तेग के ऐसे जौहर कोई तेग का बहादर ही दिखा सकता है।' इस के इलावा सिखों के साथ हुई लड़ाई का जिक्र भी इतिहास में मिलता है। यह कीरतपुर के पास रोपड़ के पठानों द्वारा सिखों पर किया गया हमला था। इस समय गुरू साहिब जी वँहां नहीं थे। कृपा गुरू की, जीत सिखों की हुई थी।

****

विछोड़े उस्ताद गुरसिखों के

'जग रचना सभ झूठ है जान लेहो रे मीत।।
कह नानक थिर ना रहे जिउ बालू की भीत।।
राम गओ रावन गओ जा को बहो परिवार।।
कहो नानक थिर कछ नहीं सुपने ज्यो संसार।।

चाहे यह फुरमान सलोकों रूप में गुरू तेग बहादर साहिब जी के हैं, पर इतिहास इस बात की गवाही देता है कि गुरू तेग बहादर साहिब जी बचपन से ही सहज अवस्था में रहते थे। बड़े बुर्जुगों और गुरसिख उस्तादों के बिछुड़ने के कारण उन का मन और गंभीर होता गया।

बाबा बुड्ढा साहिब जी का अकाल चलाणाः

1631 ई. में बाबा बुड्ढा साहिब जी की उम्र 125 साल हो चुकी थी। अपना अंतिम समय जान कर बाबा जी ने गुरू साहिब जी को सन्मुख महसूस करके अरदास की। एक सिख को गुरू हरगोबिन्द पुर भेजा कि दर्शनों की तीव्र इच्छा है। सतगुरू जी पहले ही बाबा जी की अरदास विनती प्रवान करके बाबा जी को सचखंड विदायगी देने के लिए गांव रमदास की तरफ चल पड़े। भाई गुरदास जी को उन्होंने अपने साथ ले लिया था। सतगुरू जी गांव में पहुँच चुके हैं, यह सुन कर बाबा जी सत्कार देने के लिए गांव से बाहर ही जाना चाहते थे पर शारीरिक रूप से कमज़ोर होने के कारण चल नहीं पाते थे।

गुरू साहिब जी ने आते ही बाबा जी के चरण छूहे। बाबा जी उठ कर बैठ गये। मन बैराग्य से भरा हुआ था। गुरू साहिब जी के चरण पकड़ कर आंसुओं की झड़ी लगा दी। कुछ समय तक गुरू जी ने अपनी नज़रें उन पर टिकाए रखी और फिर उनको प्यार से ऊपर उठा कर आलिंगन में ले कर प्यार दिया। फिर बहुत सत्कार से पूछने लगे,"बाबा जी, आप ने पांच गुरू साहिबान के दर्शन किए हैं, उनके बारे में थोड़ा ज्ञान अनुभव कराओ।

बाबा जी बोले,'आपजी सब जानते हैं, मेरे में क्या शक्ति है कि मैं गुरू साहिबान के बारे में कुछ बोल सकूँ।' गुरू जी ने कहा,"हम तो सब जानते हैं, पर आप के मुख से सुनना चाहते हैं।"

बाबा जी बोले,'गुरू नानक साहिब जी निरा नूर थे। गुरू अंगद देव जी निरे साधू– शांति और प्यार की मूर्ति, माया की पकड़ से ऊपर। गुरू अमर दास जी का एक हाथ सदा आशीर्वाद देने के लिए उठा रहता और दूसरा सेवा में लगा रहता। गुरू राम दास जी बिरह की मूर्ति। गुरू अरजन देव जी शांति के स्त्रोत, असहनीय को सहन करने वाले। कैसा नज़ारा था। गुरू श्रोता बना हुआ था और बाबा जी सुना रहे थे। सुनाने वाले और सुनने वाले सब की आंखों में वैराग्य के आंसू थे। गुरू बिलास पातशाही छटी अनुसारः

'भाई बुड्ढे बरनन कीया सरोता सतगुरू आप'

सतगुरू जी ने बाबा बुड्ढा जी से आशीर्वाद मांगा। बाबा जी भाव विभोर होकर कहने लगे,'' सतगुरू जी, आप जी की तलवार दुश्मनों को व्याकुल कर देगी। आप का पोता जुल्म की जड़ें उखाड़ देगा।' गुरू साहिब जी ने बाबा जी के घर ही स्नान करके बाबा जी के पास बैठ कर जपुजी साहिब का पाठ आरंभ कर दिया। ज्यों ही सलोक 'पवण गुरू पाणी पिता' पढ़ रहे थे, तो बाबा जी को पहले सारे गुरू साहिबान गुरू जोत में नज़र आये। इधर गुरू जी ने 'केती छुटी नाल' पढ़ा, उधर बाबा जी सचखंड गमन कर चुके थे। गुरू साहिब जी ने रबाबीओं को 'आसा की वार' और 'मारू डखणें की वार' का गायन करने के हुक्म किया। अंतिम यात्रा के लिए बिबान तैयार किया गया। अर्थी को एक तरफ से गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने कंधा दिया, दूसरी तरफ भाई भाना जी ने, पिछली तरफ भाई गुरदास जी और भाई अजिता जी थे। रास्ते में केवल गुरबाणी शब्दों के गायन किया जा रहा था। चन्दन की चिखा सजाई गयी थी। वाता वरण करूणामयी हो गया। खुशी–गमी में लिप्त ना होने वाले गुरू साहिब जी के नेत्रों में भी स्नेह के आंसू थेः

''चिखा ऊपर जब ही धरी साहिब बुड्ढे देह।
हरगोबिन्द के नैन ते चलियो नीर असनेह।'

प्रिंसीपल सतबीर सिंघ जी लिखते हैं कि (गुरू) तेग बहादर जी साथ ही थे। उस समय वह सिर्फ 10 वर्ष के थे। उनके ऊपर बाबा जी के सहज – स्वभाव से शरीर छोड़ने का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

<u>भाई गुरदास जी का सचखंड गमन करनाः</u>

भाई गुरदास जी गुरू नानक साहिब जी की तीसरी जोत गुरू अमर दास जी के भतीजे थे। उनके पिता जी का नाम भाई ईसर दास था। मामा जी का नाम, माता जीवनी जी था। वह गुरू अंगद देव जी के समय सिखी में आये थे। छोटी उम्र में ही माता–पिता जी के अकाल चलाणा ही जाने के बाद वह गुरू अमर दास जी के पास गोईंदवाल आ गये थे। गुरू साहिब जी ने इन का पालन पोषण अपने बच्चे की तरह किया। इन की विद्या का प्रबंध श्री सुलतानपुर लोधी में किया गया। संस्कृत, फारसी, पंजाबी और हिन्दी का ज्ञान प्राप्त किया।

गुरू अमरदास जी से लेकर गुरू हरगोबिन्द साहिब जी तक भाई गुरदास जी गुरू घर के निकटवर्ती सिखों में से थें। जब प्रिथी चन्द ने संगत की नाकाबन्दी करके राशन और भेटाएँ अपने पास रखवानी शुरू कर दी तब भाई गुरदास जी ने आगे हो कर संगतों को समझा कर गुरू अरजन साहिब जी के पास भेंजना शुरू कर दिया। गुरू अरजन देव जी ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की सारी बाणी उन से लिखवाई। उस समय श्री गुरू ग्रंथ साहिब

A

जी को पोथी साहिब कहा जाता था। वह गुरू साहिब जी के समकाली लेखक, कवि और कथाकार थे। गुरू अरजन देव जी ने उन की रचना को गुरबाणी की कुंजी का खिताब दिया। उन्होंने काफी समय तक आगरे, लखनऊ, बुरहान पुर और बनारस में सिखी का प्रचार किया।

उनको यह मान भी प्राप्त हुआ कि जब गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने श्री अकाल तख्त का निर्माण किया, तब बाबा बुड्ढा जी के साथ उनसे भी सेवा ली गई। गुर बिलास पातशाही छटी अनुसारः

'किसी राज नहि हाथ लगायो। बुड्ढा औ गुरदास बनायो।'

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी को जब जहांगीर द्वारा ग्वालियर के किले में कैद किया गया तो उन्होंने भाई गुरदास जी को श्री अकाल तख्त साहिब का जत्थेदार नियुक्त किया। जब कभी भी गुरू साहिब जी श्री अमृतसर से प्रचारक दौरे के लिए कहीं जाते तो भाई गुरदास जी को श्री अकाल तख्त साहिब का जत्थेदार बना जाते। अपनी वृद्धा अवस्था हो जाने के कारण जब उनको ऐसा लगा कि अब वह सेवा नहीं कर पायेंगे तो वह गुरू हरगोबिन्द साहिब जी की आज्ञा लेकर श्री गोईंदवाल साहिब आ गये। यहां आकर रोज़ अरदास करते कि हे भारी गुरू छटम पीर जीओ, आप जी कृपा करके मेरा अन्तिम समय आप आ कर संभाल लेना। ऐसी कृपा करना कि मेरे सुआस आप जी के चरणों मे निकलें।

यह तो हो ही नहीं सकता था कि सिख की अरदास गुरू जी तक ना पहुँचे। एक दिन गुरू साहिब जी ने भाई बिधी चन्द जी को कहा,'' जाने की तैयारी करो, अब हम ने कुछ दिन श्री गोईंदवाल साहिब जा कर रहना है।' कुछ समय बाद गुरू साहिब जी ने भाई भाना जी, भाई जेठा जी, भाई बिधी चन्द जी और कुछ अन्य सिखों के साथ गोईंदवाल साहिब की तरफ चल पड़े। वहां पहुँच कर सबसे पहले गुरू अमरदास साहिब जी के थड़ा साहिब (जिस स्थान पर बैठ कर बाउली साहिब की सेवा करवाते थे) को नमस्कार किया। साथ आये सिखों को कहा कि आप भी नमस्कार करके बाउली साहिब के सामने शामिआने लगा लो। गुरू जी आप चौबारा साहिब चले गये। वहीं पर भाई गुरदास जी को मिले और सुबह के दीवान में हाज़िरी भरने के लिए कह कर वापिस गुरसिखों के पास आ गये।

सुबह अमृत वेले का दीवान सजा। नितनेम की बाणियों का पाठ हुआ, आसा जी की वार का कीर्तन हुआ। कीर्तन की समाप्ति के बाद भाई गुरदास जी उठ कर गुरू साहिब जी के पास आ कर बोले कि अब ज्यादा समय नहीं है, अपने चरणों में जगह दे दीजिए। यह भी विनती की कि मेरा देहरा ना बनाया जाये और मेरी राख भी ब्यास में बहा देना। गुरू साहिब जी ने बाजू से पकड़ कर अपने पास बैठाया। बिल्कुल उसी तरह, जैसे बाजू से पकड़ कर अकाल तख्त पर अपने पास बैठाया करते थे। साथ ही संगत को हुक्म दिया

कि 'जपुजी' का पाठ करो। पाठ की समाप्ति के बाद भाई साहिब जी ने गुरू साहिब जी के चरणों में अपना सिर टिका दिया। भाई गुरदास जी की तरफ से जो अरदास की गई थी, गुरू साहिब जी ने उनकी भावना अनुसार उसको सम्पूर्ण किया। अधिकतर विद्वानों ने उस दिन तारीख 25 अगस्त 1636 ई. लिखी है।

अर्थी के आगे की तरफ से गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने कंधा दिया, दूसरी तरफ भाई भाना जी ने, पिछली तरफ भाई बिधी चन्द जी और भाई जेठा जी थे। सारा माहौल गमगीन था। अगले दिन भाई भाना जी को पोथी साहिब का पाठ आरम्भ करने के लिए कहा। गुरू साहिब जी और सारी संगत भोग पड़ने तक गोईंदवाल साहिब में ही रहे।

<u>भाई गुरदिता जी का सचखंड गमनः</u>

भाई गुरदिता जी (गुरू) तेग बहादर साहिब जी के सबसे बड़े भाई थे। इतिहास में यह कई विद्वानों ने लिखा है कि उनका चेहरा गुरू नानक साहिब जी से मिलता था। शायद इसी वजह से गुरू हरगोबिन्द साहिब जी उनको बचपन से ही बाबा जी कह कर बुलाते थे। या इस कारण कि वह बहुत भक्ति करते थे, या फिर अंर्तयामी सतगुरू जी जानते थे कि आगे चल कर उन्होंने बड़े गुरू– गुरू नानक साहिब जी के बड़े पुत्र बाबा श्री चन्द जी की जगह पर उदासी सम्प्रदाय की बागडोर संभालनी है।

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी परिवार सहित बाबा श्री चन्द जी को उनके डेरे में मिलने गये। उनका डेरा बारठ जिला पठानकोट में है। बाबा श्री चन्द जी ने गुरू साहिब जी का बहुत सत्कार किया। बाबा जी ने उनसे पूछा कि आप के कितने साहिबज़ादे हैं। गुरू साहिब जी ने कहा,'' जी– चार सपुत्र, एक सपुत्री। एक सपुत्र चढ़ाई कर गया है। बाबा श्री चन्द जी ने कहा कि कोई बाबे का भी है कि नहीं? गुरू साहिब जी ने फुरमाया,'सब हाज़िर है।' बाबा जी कहने लगे,''अच्छा तो फिर यह हमें दे दो जो हमारे पिता जी जैसा दिखता है। क्या नाम है इसका?''बाबा जी ने पूछा। 'जी – गुरदिता' यह बताते हुये बड़े सपुत्र को उनकी झोली में डाल दिया। बाबा जी ने कहा,''आप भी कुछ मांगो।'' गुरू साहिब जी ने फुरमाया,''परमात्मा का दिया सब कुछ है।'' बाबा जी ने कहा, ''110 साल का तप भी आप के घर देने लगे हैं। यह गुरदिता–तुम्हारा भी टिक्का, हमारा भी टिक्का और यह दीन दुनी का भी टिक्का।''

बाबा श्री चन्द जी के अकाल चलाणे के बाद बाबा गुरदिता जी ने कीरतपुर साहिब में ठिकाना बना लिया था। यहीं पर उदासी सम्प्रदाय का प्रचार करते समय एक बूढ़ी माता जी की मरी हुई गाय को ज़िन्दा कर दिया था। जब गुरू साहिब जी को इस घटना के बारे में पता चला तो उन्हों ने इस बात का बहुत बुरा मनाया। इस कारण वह सांई बुड्ढण शाह जी की समाधि के

पास चादर तान कर लेट गये और परमात्मा की जोत में अभेद हो गये। यह दिन था – 15 मार्च, 1638 ई.।

<u>भाई बिधी चन्द जी का अकाल चलाणा:</u>

बाबा गुरदिता जी के अकाल चलाणे से केवल 5 महीने बाद ही गुरू हरगोबिन्द साहिब जी के महान योद्धे और महान सिख भाई बिधी चन्द जी का अयोध्या के नज़दीक देयो नगर में सांई बुड्ढण शाह जी के चेले भाई सुन्दर शाह के साथ किये अपने वायदे अनुसार एक ही दिन, एक ही समय दोनों ने अपना देह रूपी चोला त्याग दिया। यह दिन था – 15 अगस्त, 1638 ई.।

****

श्री गुरू तेग बहादर जी की शहादत के प्रभाव

(पन्ना 7 से आगे)

हालांकि उसके आगे पीछे चोबदार चल रहे थे। एक पहरेदार की तो उंगली ही कट गई। वह उसको मौके पर ही कत्ल कर देते यदि औरंगज़ेब ना रोकता।

औरंगज़ेब की शाही डायरी 'मुआसर ए आलमगीरी' में एक और घटना लिखी है, "19 अक्तूबर को बादशाह मुबारक की स्वारी जामा मस्जिद से वापस आ रही थी, आलमगीर किश्ती से उतर कर तख्त ए रवां पर स्वार हो रहे थे कि एक सिरफिरे ने, जो गुरू तेग बहादर का सिख था, दो ईटें फैंकी, जिन में से एक तख्त पर जा गिरी। पैआदों ने उसको गिरफतार करके कोतवाल को पकड़ा दिया, जिसने उसको कत्ल कर दिया।"

यह सब घटनाएं बताती हैं कि श्री गुरू तेग बहादर की शहादत ने हिन्दुस्तान की ज़मीर को जगा दिया। जागी हुई ज़मीर ही मुगलीआ हकूमत के लिए चनौती बनी जिसने यह हुक्म किया हुआ था कि कोई गैर मुस्लिम हथियार नहीं रख सकेगा, फौजी वर्दी नहीं पहन सकेगा,

पर श्री गुरू गोबिन्द सिंघ साहिब जी ने गुरू नानक नाम लेवा सिखों को सरदारियाँ बख्शिश करने का मन बना लिया। उन्होंने ऐलान किया: "मेरा खालसा हथियार भी रखेगा, वर्दिआं भी पहनेगा, नगारे भी बजाएगा, घोड़ स्वारी भी करेगा। हमारा सिख संत भी होगा और सिपाही भी होगा।

जिसका नतीजा यह निकला कि:

'वाहेगुरू जी का खालसा॥ वाहेगुरू जी की फतेह॥' का नारा बुलंद हुआ। खालसा पंथ की साजना हुई। जागी हुई ज़मीर ने 'जै तेगंग' कह कर ललकारा:

'सुख संता करणंग दुरमत दरणंग किलविख हरणंग अस सरणंग॥
जै जै जग कारण सरिशट उबारण मम प्रतिपारण जै तेगंग॥

****

गुरू की कीर्ति अब कीरतपुर में

करतार पुर की जंग के बाद गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने अब कीरतपुर में रहना शुरू कर दिया। दीवान लगने लगे। दूर नज़दीक से अब संगत कीरतपुर आने लगी। निकटवर्ती सिखों ने अपना निवास स्थान कीरतपुर साहिब बना लिया। गुरू साहिब जी प्रचार करने के लिए यहीं से मालवे और बांगड़ देश (बीकानेर, जोधपुर का इलाका) के दौरे पर जाते और वापिस कीरतपुर आ जाते। (गुरू) तेग बहादर साहिब जी भी कई बार उनके साथ ही जाते। वह पिता गुरू जी की पीरों – फकीरों के साथ होती चर्चा को भी सुनते। आई हुई संगत की सेवा भी करते।

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने सांई बुड्ढण शाह जी के परलोक गमन के बाद उन की समाधि अपनी देख–रेख में बनवाई। उनके शारीरिक चोला त्यागने के बाद उनका एक चेला सांई सुन्दर शाह कीरतपुर आया। उनका बहुत सुन्दर स्थान बना देख कर बहुत प्रभावित हुआ। उसको बताया गया कि यह स्थान सिखों के गुरू– गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने बनवाया है। तब वह दर्शन करने आया। गुरू साहिब जी के साथ विचार करके उनका ही हो कर रह गया। भाई बिधी चन्द जी के साथ तो सुन्दर शाह की दोस्ती हो गई। वो आपस में यह वायदा भी कर बैठे थे कि वह एक ही समय और एक ही स्थान पर अपना शारीरिक चोला त्यागेंगे।

गुरू साहिब जी कीरतपुर साहिब में लगभग 11 साल रहे। गुरू साहिब जी (गुरू) हरि राय साहिब में गुरू नानक जी की जोत का वारिस होने के गुण देखने लग गये थे। बाग में टहलते हुए एक बार उनके चोले से अटक कर फूल टूट गया था। गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने कहा,"बेटा, अगर चोला बड़ा हो तो दामन संभाल कर चला करते हैं।" गुरू साहिब जी ने तो यह एक ही बार बोला था, पर वह जब भी चलते, चोला हमेंशा संभाल कर ही चलते। सदा हुक्म मानना, बाणी पढ़ते रहना, आई संगत की सेवा करना, अपने पिता जी के स्थान पर जा कर भी सेवा करना – यह सभी गुण उनमें मौजूद थे। उन्होंने कीर्तन में भी जल्दी ही निपुणता हासिल कर ली थी। गुरू साहिब जी खुद उन को शस्त्र विद्या की सिखलाई दे रहे थे। नम्रता, कोमलता और सुचमता उन के स्वभाव के अंग बन रही थी। गुरू हरगोबिन्द साहिब जी कथा करते समय (गुरू) हरि राय साहिब जी अक्सर ही उदाहरण दिया करते थे कि अगर किसी ने भक्ति, वैराग्य, तपस्या और साधना सीखनी हो तो वह बालक हरि राय से सीखें। इस लिए उन्होंने गुरू नानक साहिब जी की जोत के अगला वारिस गुरू हरि राय साहिब जी को बनाने का फैसला कर लिया था।

3 मार्च 1644 ईसवी का दिन था। अमृत वेले का दीवान सजा हुआ था। उस दिन संगत के बीच गुरू हरि राय साहिब जी, (गुरू) तेग बहादर साहिब जी, माता नानकी जी और (माता) गुजरी जी भी बैठे थे। आसा की वार की समाप्ति के बाद गुरू साहिब जी तख्त से उठे और (गुरू) हरि राय साहिब जी के पास गये। उनको बाजू से पकड़ कर उठाया और मुख से उच्चारण किया,''साहिबज़ादा जी, आज से तुम्हारा स्थान तख्त पर है।'' गुरू हरि राय साहिब जी तख्त पर बैठ गये। गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने पांच पैसे और नारियल रख कर परिक्रमा करके माथा टेक दिया। भाई भाना जी ने गुर–गद्‌दी का तिलक लगाया और माथा टेक दिया। गुरू जी ने सारी संगत को सम्बोधित करते हुए बचन किये,''मेरे समान ही गुरू हरि राय साहिब जी को जानना। सवा पहर रात रहती में जागना, उठ कर स्नान करके जपुजी के पाठ करना। जपुजी ही गुरू मंत्र का रूप है। गुरू हरि राय साहिब जी ने पूछा,''शाहजहां के साथ कैसी नीति रखनी है।'' गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने फुरमाया,''सिख का और गुरू–घर का किसी के साथ कोई बैर नहीं है। अगर कोई गुरू–घर पर चढ़ाई कर के आएगा तो उस को कभी सफलता नहीं मिलेगी, पर आप ने 2200 घोड़ स्वार सदा अपने साथ रखने हैं।

जब सारी संगत चली गई तब गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने माता नानकी जी को एक कटार और एक रूमाल देकर कहा,''जब समय आएगा तब यह वस्तुएं तेग बहादर को दे देना। अब तुम बकाले चले जाना और वहीं पर रहना। समय आने पर तेग बहादर बड़ा गुरू बनेगा।'' भाई भाना जी को कहा कि सारी संगत को आदेश कर देना कि अब हमें कोई ना बुलाए। गुरू हरगोबिन्द साहिब जी अब एकान्तवास में चले गये, केवल सुबह और शाम के दीवान में कीर्तन सुनने आते। 19 मार्च 1644 ई. के दीवान में गुरू हरगोबिन्द साहिब जी आए और सारा कीर्तन खड़े हो कर सुना। दीवान की समाप्ति के बाद गुरू साहिब जी बैठ गये। आंखें बन्द की और जोत को परम जोत में मिला दिया।

****

महिमा कीरतपुर की – दूण सवाई होई

गुरू नानक साहिब जी की सातवीं जोत श्री गुरू हरि राय साहिब जी के समय कीरतपुर की महिमा इतनी थी,कि गुरबाणी की पंक्ति ''महिमा कही ना जाये'' अपने आप मुँह से निकल जाती थी। सम्पूर्ण उपमा करने की तो कलमों के पास ताकत नहीं है, पर विद्वान यह लिखते हैं कि कीरतपुर वाहेगुरू की कीर्ति का केन्द्र बन चुका था। संगत बहुत बड़ी संख्या में हाज़िर होती। गुरू उपदेश की वर्षा होती रहती। गुरू साहिब जी के स्वभाव के बारे में इतिहासकार लिखते हैं कि उनका हृदय विशाल और चित बहुत कोमल था। नेम उनका अपने दादा गुरू– गुरू हरगोबिन्द साहिब जी द्वारा किये गये हुक्म से भी ज्यादा था। पहर रात रहने से पहले उठ जाते थे। स्नान बहुत खुले जल से करते थे। 'महिमा प्रकाश' ग्रंथ में 101 गागरों से स्नान करने का ज़िक्र आता है। उसके बाद समाधि लीन हो जाते। फिर संगत में जाकर पहले पोथी साहिब का पाठ सुनते। रबाबियों से कीर्तन सुनते। प्रशादा लंगर में ही छकते। फिरा थोड़ा आराम करते। उसके बाद गुरसिखों को साथ लेकर शिकार खेलने जरूर जाते, पर जानवरों को मारते नहीं थे, ज़िन्दा पकड़ कर ले आते। जो जानवर और पक्षी बीमार या ज़ख्मी होते, उनका इलाज किया जाता और कीरतपुर के नज़दीक बनी एक रखॅ में छोड़ देते। उस रखॅ में गुरू साहिब जी 2–3 दिन बाद चक्कर जरूर लगा लेते। उनके आने पर जानवर और पक्षी चहक उठते, ऐसा लगता कि उनका इंतज़ार ही कर रहे हों।

गुरबाणी का बहुत ज्यादा सत्कार करते थे। एक बार काबुल की संगत शब्द गायन करती हुई आ रही थी, गुरू साहिब जी इतनी जल्दी उठे कि घुटने पर चोट लग गई। सिखों ने पूछा कि गुरू साहिब जी, आप इतनी जल्दी क्यों उठे कि चोट ही लग गई? तो संगत के साथ जो बचन किये, वह 'सूरज प्रकाश' ग्रंथ में दर्ज हैं:

'जो सिख बाणी भै करैं।
बिन प्रयास भव सागर तरै।
जिन भै अदब ना बाणी धारा।
जानो सो सिख नहीं हमारा।'

अक्सर ही गुरू साहिब जी संगत के साथ बचन बिलास करते समय बाणी अधिक से अधिक पढ़ने, कंठ करने और सत्कार करने की प्रेरणा देते थे। बाणी के सत्कार के कारण ही गुरू साहिब जी ने अपने बड़े पुत्र राम राय को यह हुक्म सुना दिया था कि 'आज से हमारे माथे नहीं लगना'। राम राय

ने 'आसा की वार' की बाणी के एक श्लोक में से केवल एक शब्द 'मुसलमान' की जगह पर 'बेईमान' बोल दिया था। राम राय ने यह केवल औरंगज़ेब को खुश करने के लिए बदला था। गुरू पुत्र होते हुये भी उसको गुरू–घर से निकालना जहां बाणी के सत्कार की हद थी, वहां यह आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सबक भी था।

कीरतपुर साहिब में गुरू साहिब जी ने एक बाग लगवाया, जिस में ऐसी जड़ी–बूटीयां और पौधे थे, जिन को दवाईयां बनाने में प्रयोग किया जाता था। इन से तैयार होने वाली दवाईयां उस शफाखाने (डिसपैंसरी) में प्रयोग की जाती थी, जो गुरू साहिब जी ने कीरतपुर साहिब में खोल रखा था। हर कोई इस शफाखाने से बिना भेद भाव के इलाज करवा सकता था। इस की प्रसिद्धी दूर–दूर तक फैली हई थी। दिल्ली तख्त के हाकिम शाहजहां का पुत्र दारा शिकोह जब बीमार हुआ तो वैद्यों ने गुरू हरि राय साहिब जी के दवाखाने से दवा रूपी लौंग और हरड़ें मंगवाई थी, जो केवल कीरतपुर में गुरू साहिब जी के बाग में ही उगाई हुई थी। 'ना को बैरी नहीं बेगाना सगल संग हम को बन आई' गुरबाणी के इस पावन बचन और गुरू हरगोबिन्द साहिब जी द्वारा शाहजहां के प्रति किए गये हुक्मानुसार उस के भेजे गये दूतों ने जो जो वस्तुएं मांगी, उनको दे दी गई।

दारा शिकोह के ठीक होने पर जहां शाहजहां ने उस को गुरू साहिब जी का शुकराना करने के लिए कीरतपुर साहिब भेजा तो साथ में बहुत सारे तोहफे भी भेजे। वहीं सिखों के प्रति अपनी नीति में भी थोड़ा बदलाव कर दिया। यही कारण था कि राजसी ताकत की ओर से विरोघ ना होने के कारण गुरू हरि राय साहिब जी के समय मार्च 1644 से अक्तूबर 1661 ई. तक शांतमई तरीके से गुरू–घर का प्रचार होता रहा।

अपने बड़े पुत्र राम राय की गलती और हुक्म ना मानने के कारण उन्होंने छोटे पुत्र (गुरू) हरिकृश्न साहिब जी को गुर–गद्दी का वारिस जान कर 5 अक्तूबर 1661 ईसवी में (गुरू) हरिकृशन साहिब जी की परिक्रमा करके गुरू नानक साहिब जी की जोत उनको बख्श दी। अगले दिन आप परमात्मा की गोद में समा गये।

****

'जिस डिठे सभि दुख जाये'

गुरू हरिकृशन साहिब जी के केवल दर्शन करने से दुख दूर हो जाते हैं। यह बचन गुरू गोबिन्द सिंघ साहिब जी के हैं। इन बचनों को लाखों लोग संगत के रूप में हर रोज़ अरदास में दोहराते हैं:'श्री हरिकृशन धिआईऐ जिस डिठे सभि दुख जाये।। 'ऐसे गुरू साहिब जी को भाई गुरदास जी (दूसरे) ने अपनी वार में ''अष्टम बलबीरा'' कहा है। भाई नंद लाल जी ने ''सलतनत हश्तम'' कह कर सम्मान दिया है। सारा सिख जगत उनको ''बाला प्रीतम''कह कर सत्कार देता हैं।

श्री (गुरू) हरिकृशन साहिब जी का प्रकाश 7 जुलाई 1656 ई. को कीरतपुर साहिब में गुरू हरि राय साहिब जी के घर हुआ। माता जी का नाम किशन कौर जी था। इन का नाम रखते समय गुरू साहिब जी ने 'हरि' अपने नाम से और 'किशन' अपने महल के नाम से मिला कर रख दिया।

(गुरू) हरिकृशन साहिब जी 5 साल 4 महीने के थे जब उनको गुरू नानक साहिब जी की जोत उनके पिता गुरू जी ने बख्शी। उनकी शारीरिक उम्र केवल 7 साल 8 महीने थी। गुर–गद्दी पर वह 2 साल 4 महीने बिराजमान रहे। बाल्यावस्था के इस थोड़े से समय में उन्होंने बहुत महान कार्य किये। कीरतपुर साहिब में कोहड़ी का कोहड़ दूर करना, पंजोखरा साहिब में, लाल चन्द ब्राह्मण का, छज्जू नाम के झिऔर, जो अच्छी तरह बोल भी नहीं पाता था, से गीता के अर्थ करवा के अहंकार तोड़ना, दिल्ली में राजा जै सिंघ की रानी की पहचान करना– यह साखियां तो बहुत प्रचलित हैं, और प्रत्येक ने पढ़ सुन रखी हैं। यहां कुछ ऐसी साखियों का जिक्र कर रहे हैं, जिन से स्पष्ट हो जाता है कि गुरू नानक साहिब जी की जोत बाकी सारे गुरू साहिबान की तरह बाल गुरू हरिकृशन साहिब जी में भी विद्यमान थी क्योंकि संगतों के साथ बचन करते समय गुरमत सिद्धान्त और गुरबाणी विचार बिल्कुल बड़े गुरू साहिबान जी की तरह करते थे और गुरू नानक जी के मिशन को आगे बढ़ाने में अपना योगदान डाल रहे थे।

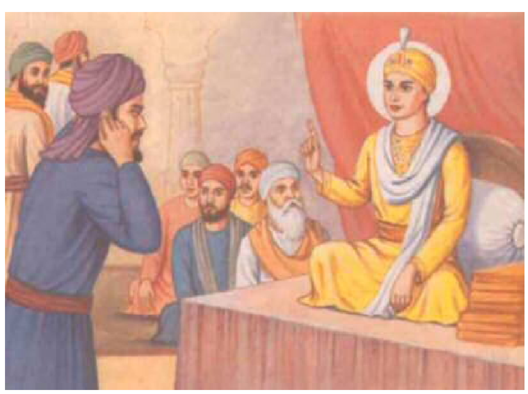

एक बार कीरतपुर साहिब में पेशावर के इलाके की संगत के साथ एक जेब कतरा, जो चोरी के इरादे से आया था। जब अपनी बारी आने पर गुरू साहिब जी को माथा टेकने लगा तब गुरू जी की कृपा दृष्टि ने उसके अन्दर हलचल मचा दी, परन्तु जब गुरू जी ने गुरबाणी की पंक्तियां सुनाई:

"चोर सलाहे चीत न भीजै।। जे बदी करे ता तसु न छीजै।।
चोर की हामा भरे न कोए।। चोर कीआ चंगा कयो होए।।(पावन अंग 662)
तो वह चोर खड़ा हो कर ऊँची आवाज़ में बोला,"संगत जी मैं पेशावर के इलाके का चोर हूँ। जेब काटना मेरा धन्धा है। अब गुरू साहिब जी ने दया करके मुझे सीधा रास्ता दिखाया है। मैं गुरू साहिब जी से और सारी संगत से माफी मांगता हूँ जी।"

रोपड़ का एक शाहूकार व्यापारी गुरू साहिब जी के पास बहुत सारी भेटाएं लेकर हाज़िर हुआ। गुरू साहिब जी ने उस को संगत में आने से मना कर दिया, क्योंकि वह लड़की पैदा होते ही मार देता था। बाहर खड़े सेवादार को कहा कि मुझे एक बार गुरू साहिब जी से मिलवा दो, फिर जो हुक्म गुरू जी करेंगे, मैं उस हुक्म को मानूँगा। उसके तोबा करने पर ही गुरू साहिब जी ने उसको दर्शन दिये। उस दिन गुरू साहिब जी ने सारी संगत को हुक्म किया कि 'लड़की–मार' के साथ किसी सिख ने मेलजोल नहीं रखना। गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने बाद में इसको सिखों के लिए 'रहतनामे' का अंग बना दिया। इसी तरह तम्बाकू का सेवन ना करने का हुक्म भी बाला–प्रीतम जी ने ही किया था। केसों की महानता बताते हुये अक्सर ही संगत में बचन किया करते थे कि गुरू नानक साहिब जी ने भाई मरदाना जी को तीन उपदेश दिये थे, जिस में सबसे पहला केस ना काटने का था। एक दिन भाई नईया संगत में आया। उसने विनती की कि मन की एकाग्रता भंग होती है। मन में डरावने विचार बनते रहते हैं। गुरू साहिब जी ने उसको केसाधारी होकर सिमरन करने को कहा। इस से ही दुख रोग का डेरा टूट जायेगा। इस नईया नाम के सिख को गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने शस्त्र धारी बनाया और 'नईया योद्धा' का खिताब दिया।

गुरू साहिब जी की शोभा सुन कर एक ब्राह्मण काशी से आया था उस का नाम बसंतर था। उसको कोहड़ की बीमारी हो रही थी। ज्यों ही गुरू साहिब जी के पास बीमारी दूर करने की विनती की, तो गुरू साहिब जी ने कहा,"पंडित जी, यह शारीरिक कोहड़ तो बड़े गुरू साहिब जी कर कृपा से दूर हो ही जायेगा पर आप उस कोहड़ को दूर करने का यत्न करो जो तुमने और तुम्हारे साथियों ने जाति–पाति और ऊँच नीच का संसार में फैला रखा है।

गुरू साहिब जी की कीर्ति पूरे देश में फैल चुकी थी। जो भी दर पर आता 'इच्छापूरक सरब सुखदाता हर' जी सब की इच्छाएं पूरी करते थे। कोई दरिद्रता दूर करने की विनती करता। कोई पुत्र मांगता। कोई मांगे वैरी से छुटकारा। कोई रोगों कष्टों का निवारण करवाने आता। कोई विरले इन्सान ऐसे आते जो चरण–कमलों की प्रीति मांगते – सिमरन का दान मांगते। गुरू

साहिब जी ऐसे इन्सानों पर कृपा करके सिमरन की दात बख्शते और आगे बांटने के प्रण ले कर अपने हाथ से सिरपाओ पहनाते।

राम राय कीरतपुर में गुरू हरिकृशन साहिब जी की शोभा को बढ़ता देख कर बहुत ईर्ष्या करता था। उसने दूर से आने वाली संगतों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए अपने बन्दों को उनके इलाकों में भेजा पर गुरू हरि राय साहिब जी के द्वारा पहले ही भेजे हुक्मनामों के कारण उनको किसी संगत ने मुँह नहीं लगाया। हार कर उसने औरंगज़ेब के पास शिकायत कर दी कि गुरू हरिकृशन साहिब जी को दिल्ली बुला लो, उनके पास भी बहुत करामातें हैं। राम राय औरंगे की करामातों को देखने वाली कमज़ोरी को जानता था। असल में राम राय यही चाहता था कि गुरू हरिकृशन साहिब जी औरंगज़ेब के शाही जाहो जलाल के प्रभाव में आकर करामातें दिखाएं और वह संगत को यह बता सके कि अब तो गुरू जी भी करामातें दिखाते हैं।

राम राय के बार बार ज़ोर डालने पर और यह कह कर कि कई मुस्लिम फकीर भी गुरू शरण में आते हैं, तो औरंगे ने अपने दीवान परस राम को राजा जै सिंघ के पास भेजा, और गुरू साहिब जी के लिए अपने हाथ से चिट्ठी लिख कर भेजी कि मुझे दिल्ली आ कर दर्शन दो। मेरा आप के साथ कुछ बचन करने को मन करता है। राजा जै सिंघ ने दीवान को यह समझाया कि गुरू साहिब जी को बहुत सत्कार से मिलना और यह भी कह देना कि अगर आपका मन राजे को मिलने का होगा तो ही उस को मिलना। दीवान परस राम कीरतपुर आया। उसने सिखों से मिल कर अपने मन की बात बताई। उन्होंने गुरू हरिकृशन साहिब जी तक औरंगज़ेब और राजा जै सिंघ का संदेशा पहुँचाया। गुरू जी ने भाई दरगाह मॅल जी, भाई मनी (सिंघ) जी, भाई दयाला जी, भाई सती दास जी को बुला कर उनकी सलाह पूछी। सब का यह विचार था कि औरंगज़ेब अगर सिखों के साथ वैर नहीं रख रहा तो दिल्ली जाने में कोई हर्ज नहीं।

अगले दिन दीवान में परस राम हाज़िर हुआ। उसने औरंगज़ेब की चिट्ठी पढ़ कर सुनाई और राजा जै सिंघ द्वारा की गई विनती के बारे में भी बताया। गुरू जी ने कहा,"हम दिल्ली आयेंगे पर ना तो औरंगज़ेब को मिलने जायेंगे और ना ही उसको दर्शन देंगे। परस राम वापिस चला गया और सिखो ने दिल्ली जाने की तैयारी शुरू कर दी। ज्यों ज्यों संगत को पता चलता गया, प्रति दिन संगत दूर दूर से कीरतपुर पहुँचने लगी। गुरू जी ने संगत को भी साथ चलने के लिए कह दिया। जब चलने लगे तो सबसे पहले नगारा, फिर 2100 घोड़ सवार, उनके पीछे गुरू साहिब जी का घोड़ा, उसके पीछे माता जी की पालकी, फिर कीर्तन करती हुई सिख संगत जा रही थी। सब से पीछे 100 घोड़ स्वार और थे। यह नज़ारा ऐसा था जैसे कोई शाही राज कुमार की

स्वारी जा रही हो।

कीरतपुर से चल कर पहला पड़ाव रोपड़ में किया। यहां काबुल कंधार की संगत भी आ मिली। यहां से फिर सारा जत्था कुराली, खरड़, बनूड़ में पड़ाव करता हुआ पंजोखरा पहुँचा। यहां पंडित लाल चन्द का अंहकार दूर किया और उसको अपना सिख बना लिया। वह भी दिल्ली साथ ही गया। यह पंडित बाद में गुरू गोबिन्द सिंघ जी से खंडे की पाहुल छक कर सिंघ सजा, गुरू दरबार में भी सेवा करता रहा और चमकौर की जंग में शहीद हो गया। जिस भाई छज्जू से गीता के अर्थ करवाये थे। गुरू गोबिन्द सिंघ जी महाराज के पांच प्यारों में से भाई हिंम्मत सिंघ जी उनके वंश में से थे।

गुरू साहिब जी ने यहां से सारी संगत को वापिस जाने का हुक्म कर दिया। अपने साथ नगारची, 2200 घोड़–स्वार, माता जी और कुछ गुरमुख प्यारे सिखों को साथ जाने की आज्ञा दी। यहां से गुरू साहिब जी लखनौर, निसम्बली, शाहबाद, रतन जख से पिपली होते हुये कुरूक्षेत्र पहुँचे। वहां से बड़बल, सिआमण, करनाल से पानीपत और सोनीपत के रास्ते से दिल्ली की ओर बढ़ रहे थे। यहां से लोकल संगत भी बहुत गिनती में साथ चल पड़ी। राजा जै सिंह 2 मील आगे आ कर लेने आया। राजा जै सिंघ ने बहुत श्रद्धा से स्वागत किया। गुरू साहिब जी ने भी सब का हाल चाल पूछा। गुरू जी को उसने अपने बंगले में ही ठहराया। यहीं पर अब गुरूद्वारा बंगला साहिब बना हुआ है। गुरू साहिब जी ने राजा जै सिंघ को स्पष्ट रूप से कह दिया कि शाह को मिलने या उसको बंगले में लाने की बात ना करना। हम तो दिल्ली की संगत के प्यार देख कर और उनकी मुश्किलों का हल करने के लिए आये हैं।

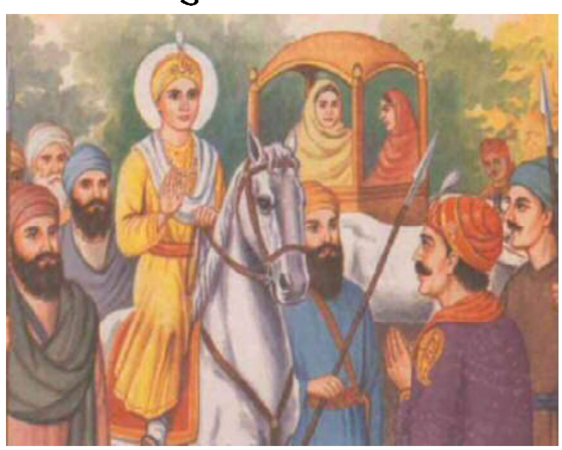

कुछ दिनों बाद राजा जै सिंघ जब गुरू जी के दर्शन करने के बाद उठने लगा तो बहुत ही चतुराई के साथ बोला कि वह बादशाह के पास जा रहा है। गुरू जी ने उसको याद करवाया कि वह अपने पिता गुरू जी के द्वारा कहे बचनो पर दृढ़ हैं। उनका कहना था 'नहि मलेछ को दर्शन दे हैं'। थोड़ा घबराते हुए जै सिंघ ने औरंगज़ेब को सारी बात बताई। यह स्वभाविक है कि जब कोई ना मिलना चाहे, तो उस से मिलने की इच्छा और अधिक हो जाती है। औरंगज़ेब के साथ भी यही हो रहा था। उसने एक चाल चली। एक दूत के हाथ कुछ तोहफे, जो कि वस्त्र, गहने, खिलौने, कुछ रत्न और एक

तसबी (माला) भेजी। गुरू जी ने केवल तसबी रख कर बाकी वस्तुएँ वापिस भेज दी।

कई विद्धानों ने यह माना है कि औरंगज़ेब के कहने पर राजा जै सिंह ने अपनी रानी को वेश बदल कर नौकरानियों के साथ बैठने को कहा क्योंकि वह चाहता था कि अगर रानी को ना पहचाना तो वह भी वेश बदल कर बंगले में चला जाएगा। साथ ही गुरू साहिब की परीक्षा भी ली जा सकेगी, पर गुरू जी ने सीधा रानी के सिर पर छड़ी रख कर कहा कि रानी हो कर आप को ऐसा कपट करने की क्या ज़रूरत थी।

दिन प्रति दिन संगतों की गिनती बंगले में सजते दीवान मे बढ़ रही थी। एक दिन औरंगज़ेब ने अपने छोटे शहजादे को संगत में भेजा। गुरू साहिब जी ने उसका सत्कार किया। वह गुरू साहिब जी के दरबार में सेवादार, चोबदार (हाथ में शस्त्र पकड़ कर खड़ा पहरेदार सिख) और घोड़ स्वार देख कर अपने राजसी ठाठ–बाठ के साथ तुलना कर रहा था। वह गुरू दरबार में संगत का उत्साह और गुरू जी के प्रति श्रद्धा को देख कर हैरान हो रहा था। लोगों की ज़रूरतों का तुरंत हल देख कर मन ही मन वह बाला प्रीतम जी का मुरीद होता जा रहा था। मौका पा कर उसने कह ही दिया कि आप पिता जी को मिल ही लो, वह बहुत खुश होंगे। गुरू साहिब जी ने साफ ही कह दिया कि जो केवल करामात ही देखना चाहता है, मन में कोई श्रद्धा ही नहीं है, मन में केवल कपट भरा है, उसके लिए गुरू दरबार में कोई स्थान नहीं। शहजादे ने विनती की कि उनके लिए कोई संदेश ही लिख दो। उसकी विनती पर गुरू साहिब जी ने फारसी अक्षरों में गुरू नानक साहिब जी की बाणी – 'वडहंस की वार' में से दो सलोक लिख कर भेजे:

मः १ सलोक
सो जीविआ जिस मनि वसिआ सोए।। नानक अवर न जीवै कोए।।
जे जीवै पत लथी जाए।। सभ हराम जेता किछ खाए।।
राज रंग मालि रंग।। रंग रता नचै नंग।।
नानक ठगिआ मुठा जाए ।। विण नावै पत गएआ गवाए।।

मः १ सलोक
किआ खाधै किआ पैधै होए।। जा मनि नाही सच्चा सोए।।
किया मेवा किया धिउ गुड़ मिठा किया मैदा किया मास।।
किआ कपड़ किआ सेज सुखाली कीजहि भोग विलास।।
किआ लसकर किआ नेब खवासी आवै महली वास।।
नानक सच्चे नाम विण सभे टोल विणास।।(पावन अंग 142)

इतिहास इस बात की गवाही भरता है कि इस चिट्ठी को पढ़ कर और शहजादे से गुरू दरबार की इलाही शान सुन कर उसने गुरू साहिब जी को मिलने का पक्का मन बना लिया और एक दिन औरंगज़ेब सुबह ही उनके बंगले पर पहुँच गया। गुरू साहिब जी ने दरवाजे बन्द करवा दिए। उस ने चोबदार को कहा कि केवल दर्शन ही करने हैं। मैं कोई बचन नहीं करूंगा। दीवान दरगाह मल ने औरंगज़ेब को जा कर बताया कि गुरू साहिब जी किसी भी हालत में तुम्हें नहीं मिलेंगे, पर इसके बावजूद भी औरंगज़ेब आधी घड़ी बाहर खड़ा रहा।

इन दिनों में दिल्ली में एक बीमारी फैल गई। जिस को भी यह बीमारी हो जाती उसको ऐसा महसूस होता कि जैसे सारे शरीर पर कोई सूईयां चूभो रहा हो। बाद में बुखार होता और लगभग दो – तीन दिनों बाद ही मरीज़ की मौत हो जाती। देखते ही देखते यह बीमारी सारी दिल्ली में फैल गई। हज़ारों लोग रोज़ मरने लगे। कोई दवा भी काम ना करे। गुरू साहिब जी गलियों मुहल्लों में गये। बीमार लोगों पर कृपा दृष्टि डाल कर निरोग किया। जो बीमारी से मर गये, उनकी सम्भाल के प्रबन्ध भी सिखों द्वारा करवाये गये। बीमारी इतनी फैली कि गलियों में से निकलना भी मुश्किल हो गया, ज़रूरतमंद गलियों में घेर लेते। फिर गुरू साहिब जी बंगले के झरोखे में बैठ कर दर्शन देते और जल का छींटा भी देते। जब यहां भी दुखियों की बारी ना आती, फिर गुरू साहिब जी ने जल का कुंड (चुबच्चा) बनवा दिया। जिस में से संगत जल का छींटा लगा कर निरोग हो जाती। आज भी बंगला साहिब में संगत इस चुबच्चे से जल छक कर अपने आपको भाग्यशाली मानती हैं। इस जल के साथ करोना महामारी के समय भी लोग निरोग होते देखे गये हैं। सोशल मीडीआ पर अनेकों वीडीओज़ इस बात के प्रमाण हैं।

जब गुरू हरि राय साहिब जी ज्योति जोत समाये तब (गुरू) तेग बहादर साहिब जी पूरब की सिखी प्रचार यात्रा पर गये हुये थे। वापसी पर जब उनको गुरू हरिकृशन साहिब जी के दिल्ली में होने की खबर मिली तब वह दिल्ली पहुँचे और भाई कल्याणा जी की धर्मसाल में रुके। गुरू हरि राय साहिब जी के ज्योति जोत समाने के बाद वह बंगले मे माता किशन कौर जी और गुरू हरिकृशन साहिब जी को मिलने गये। भटों की वहीओं अनुसार यह 21 मार्च 1664 ई. का दिन था। तीन दिन (गुरू) तेग बहादर साहिब जी बंगले में रहे। फिर विदाई लेकर वह बकाले के लिए चल पड़े।

गुरू साहिब जी ने भाई दरगाह मल को कहा कि अब वह इस बंगले में नहीं रहना चाहते क्योंकि जब से औरंगज़ेब बंगले में से बिना दर्शन किये गया है, तब से वह एक ही बात के पीछे पड़ा हुआ है कि या तो गुरू जी दर्शन दें या करामात दिखाएं। तब दरगाह मल ने भाई कल्याणा जी की धर्मसाल में जाने की सलाह दी। गुरू साहिब जी ने माता जी सहित राजे का बंगला छोड़

कर धर्मसाल में जाने का फैसला किया। इसका यह भी कारण था कि शहर के बीचो बीच होने के कारण यहां घनी आबादी थी और बीमारी का ज़ोर भी बढ़ रहा था। गुरू साहिब जी रोगियों के रोग दूर करने के लिए ही तो आए थे। गुरू जी के यहां बिराजमान होने की वजह से संगतों और बीमारों की भीड़ भी लगी रहती थी। इस वजह से गुरू साहिब जी को ना तो दिन में आराम करने का समय मिलता और ना ही रात को। गुरू साहिब जी हर समय संगत की सेवा में तैयार रहते। रोगी तो केवल उनकी कृपा दृष्टि से ही ठीक हों रहे थे। गुरू साहिब जी की शारीरिक थकावट बहुत बढ़ गई थी। गुरू साहिब जी यह भी जानते थे कि औरंगा पिता गुरू जी के साथ किये हुये प्रण को राजसी ताकत के बलबूते तोड़ने का प्रयत्न करेगा, क्योंकि उसने बखेड़ा खड़ा किया हुआ था कि दर्शन दो या करामात दिखाओ। इस लिए गुरू साहिब जी ने दिल्ली वाली बीमारी अपने ऊपर ले ली। धीरे धीरे शरीर की गर्माइश बढ़ गई।

इतिहास इस बात की गवाही भरता है कि ज्योति जोत समाने का फैसला गुरू साहिब जी का अपना था। भाई गुरदास जी (दूसरे) की वार की 22वीं पौड़ी इस बात का प्रमाण है:

'श्री हरिकृशन भयो अष्टम बलबीरा।
जिनी पहुँच देहली तजओ शरीरा।
बाल रूप धरिओ, स्वांग रचाए।
तब सहजे तन को छोड़ सिधाए।
एऊँ मुगलन, सीस परी बहु छारा।
वह खुद पत सिओं पहुँचे दरबारा।'

पांचवें दिन गुरू साहिब जी ने आंखें खोली तब माता जी को जो बचन कहे, वह इतिहास में दर्ज हैं:

'हमरा तुरकन सो मेल न होये। जो हरि भावै होवै सोये।
पांच दिवस इम बीतत भया। तब माता जी को सतगुर कहआ।
अब हम परम धाम को जावें। तन तज जोती जोत समावै।'

भाई दरगाह मल जी ने पूछा कि संगत को किस के लड़ लगा चले हो? तब गुरू जी ने हुक्म किया,''पांच पैसे और नारियल ले आयें।'' दरगाह मल जी सोने के थाल में रख कर यह वस्तुएं ले आये।गुरू साहिब जी ने लेटे–लेटे ही पांच पैसे और नारियल ले कर तीन बार गोल घुमाया फिर माथे से छुहा कर थाल में यह वस्तुएं रख कर बचन किये:''बाबा बसे जि ग्राम बकाले।'' गुरू नानक साहिब जी की जोत बकाले. पहुँचा कर नेत्र मूंद लिए और अपने आप को परम जोत में मिला लिया। यह दिन था 30 मार्च 1664 ईसवी।

****

'गुरू लाधो रे'

जैसे जैसे गुरू हरिकृशन साहिब जी के बचन – ''बाबा बसे जि ग्राम बकाले'' सिख संगत को ज्ञात होते गये। संगत बकाले में पहुँचने लगी। गुरू घर के सोढी बाबाओं ने भी बकाले में आ कर डेरे लगा लिए। इतिहास गवाह है कि 22 बाबे ने मंजिआं लगा कर गुरू बन बैठे थे। (मंजिआं से भाव अपने अपने कैम्प लगा कर बैठ गयें) उनके शिष्य संगत को गुमराह करके अपनी ओर खींच रहे थे। इनमें सबसे बड़े दावेदार बाबा धीर मल थे, क्योंकि उनके पास पोथी साहिब की बीड़ थी।

बकाले में हो रही यह सारी घटनाएं माता नानकी जी को परेशान कर रही थी, क्योंकि वह जानते थे कि गुरू हरगोबिन्द साहिब जी के बचन पूरे होने का और उनके द्वारा दिये गये 'रूमाल और कटार' भेंट करने का समय आ गया है। उन्होंने अमृतसर से भाई गढ़िआ जी और गुरू अमरदास जी की वंश में से मुखिआ भाई द्वारका दास जी को बकाले बुला लिया। इधर दिल्ली की संगत दीवान भाई दरगाह मल जी के नेतृत्व मे गुरू हरिकृशन साहिब जी द्वारा बखिशश की गई गुर–गद्दी की वस्तुएं ले कर बकाले की ओर चली हुई थी। भाई गुरदिता जी (बाबा बुड्ढा जी के पड़पोते) को भी संदेशा भेज कर बुला लिया गया। उन्होंने (गुरू) तेग बहादर साहिब जी को विनती की कि अब समय आ गया है कि वह अपने आप को प्रकट करें और आप ही बन बैठे गुरूओं के पास भटक रही संगत को सही राह दिखाएं। (गुरू) तेग बहादर साहिब जी ने उनकी विनती को स्वीकार करते हुए सब की सलाह के साथ गुर–गद्दी की रस्म के लिए 11 अगस्त 1664 ईसवी का समय निश्चित किया गया, और कुछ प्रमुख सिखों को उपस्थित होने का आदेश दिया। बाबा सूरज मल जी के पुत्र भाई दीप चन्द और भाई नन्द चन्द जी को भी कीरतपुर से बुला लिया गया। दीवान सजा, अमृत वेले के नितनेम और आसा की वार के कीर्तन के बाद भाई दरगाह मल जी ने खड़े हो कर नारियल और पांच पैसे एक सोने के थाल में रख कर तीन बार गुरू तेग बहादर साहिब जी के ऊपर से वार कर उनकी झोली में डाल दी। बिल्कुल उसी तरह, जिस तरह गुरू हरिकृशन साहिब जी ने अपने कर कमलों से घुमाई थी। भाई गुरदिता जी ने खड़े हो कर गुरू साहिब जी को तिलक लगाया और परिक्रमा करके माथा टेक दिया। उनके बाद माता नानकी जी ने 'कटार और रूमाल', जो गुरू हरगोबिन्द साहिब ने गुरू हरि राय साहिब जी को गुर–गद्दी पर बैठाने के बाद माता नानकी जी को दिए थे, वह गुरू तेग बहादर साहिब जी को भेंट करके माथा टेक दिया। कई विद्वानों ने इस 'रूमाल' के बारे में बहुत ही

सुन्दर विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि गुरू हरगोबिन्द साहिब जी द्वारा भेंट किया यह रूमाल 14 साल बाद 11 नवम्बर 1675 ई. को चांदनी चौंक में वह 'चादर' बना जिसने सारी सृष्टि को ढाक लिया। जो गुरसिख उस समय आमन्त्रित थे, सब ने माथा टेका और अपनी योग्यता अनुसार भेटाएं अर्पित की। गुरू साहिब जी ने बहुत संक्षेप में बचन किया और हुक्म किया कि हम समय आने पर प्रकट हो कर सब को दर्शन देंगे, अभी आप ने इसको गुप्त ही रखना है। गुरू साहिब जी जानते थे कि यह अवस्था ज्यादा देर तक नहीं रहेगी।

भाई मक्खण शाह लुबाणा, जो एक बड़े धनवान व्यापारी थे, 9 अक्तूबर को बकाले पहुँचे। उसके साथ उसके दोनो पुत्र भाई लाल चन्द और भाई खुशहाल चन्द और उसकी सुपत्नी सलोजई भी थी। वह अपने साथ 2000 घोड़ स्वार सिपाही भी ले कर आया था। गुरू घर का सच्चा श्रद्धालु सिख था। उसके पिता जी दासे शाह गुरू हरगोबिन्द साहिब जी के समय श्री अमृतसर आया करते थे। भाई मक्खण शाह मुगल फौजों को खाद्य सामग्री सप्लाई करते थे। सूरत के पास इनका समुद्री जहाज तूफान में घिर गया। जहाज चालकों ने उसको बताया कि अब इस जहाज को डूबने से बचाना मुश्किल है। इस लिए हमें अपनी जाने बचाने के लिए दूसरे उपाय कर लेने चाहिए। भाई मक्खण शाह ने अपना हाथ मुंह धो कर एक साफ कपड़ा बिछा कर बहुत सहज से गुरू साहिब जी को हाज़िर नाज़िर मान कर जपुजी साहिब का पाठ किया। उपरन्त बेड़ा किनारे लगाने की अरदास की। दसवन्ध के साथ 500 मोहरें भेंट करने का संकल्प किया। अरदास करते ही ऐसी कृपा हुई कि भारी तूफान होने के बावजूद भी उसका जहाज डगमगाने से हट गया। कुछ समय पश्चात समुद्र कुछ शांत हुआ। उनका जहाज किनारे लग गया। अब भेटाऐं ले कर दिल्ली पहुँचे, जहां से उसे गुरू हरिकृशन साहिब जी के ज्योति जोत समाने का और उनके आखिरी बचनो 'बाबा बसे जि ग्राम बकाले' के बारे में पता चला।

उसके सिपाही बकाले के थोड़ा बाहर की ओर अपने तंबू लगा रहे थे, तब सब मंजीदार यह सोच कर प्रसन्न थे कि कोई नवाब या शहज़ादा बकाले में आ रहा है। सब यह प्रयत्न करने लगे कि वह पहले उनके डेरे में ही आए। उधर भाई लुबाणा जी जहां इतने गुरू देख कर हैरान थे, वहां यह भी सोच रहे थे कि अब सच्चे गुरू से कैसे मिला जाए और उनको अपनी भेटांऐ अर्पण की जाएं। अगले दिन उन्होंने 2–2 सोने की मोहरें भेंट करके सभी बाबांओं को माथा टेकना शुरू कर दिया। उन्होंने यह भी सोच लिया कि जो गुरू नानक साहिब जी की जोत के मालिक होंगे वह अपनी अमानत अपने आप

मांग लेंगे। पर जितने भी वहां बैठे थे, कोई भी उनके दिल की बात जान ना सका। निराश हो कर वह अपने तम्बू में वापिस आ गया। कुछ दिनों बाद किसी ने उसको बताया कि एक और सोढी बाबा तेग बहादर भी हैं, जप तप भी बहुत करते हैं, पर उन्होंने कोई मंजी नहीं लगाई हुई। भाई मक्खण शाह ने वहां जा कर भी 2 मोहरें उनकी परीक्षा लेने के लिए भेंट करके माथा टेका और सन्मुख हो कर बैठ गया। गुरू साहिब जी उसको देख कर मुस्कराये और बचन किए,''शाह जी, अपना वायदा भूल क्यों रहे हो। 500 मोहरों की बजाए केवल दो मोहरें, हमारा तो तुम्हारे जहाज को लगाए कंधे का ज़ख्म भी अभी पूरी तरह ठीक नहीं हुआ।'' फिर गुरू साहिब जी ने कंधे से थोड़ा कपड़ा हटा कर पावन शरीर पर पड़े हुए नील भी भाई मक्खण शाह को दिखाए। 'महिमा प्रकाश' ग्रंथ के अनुसारः

'सुन सिख डुबदी नाओ तुम, हम कंढे दीन लगाए।
कंधे मुहि घासी लगी किओ पूजा दिऊ दुराए।'

बस फिर तो उसकी खुशी का ठिकाना ना रहा। गुरू साहिब जी के चरणों पर अपना शीश रख कर कहा,''आपने आज फिर मुझे डूबते हुए को बचा लिया है। मेरे भटकते हुए मन को टिका दिया है।'' यह कह कर वह छत पर जा चढ़ा। ऊँची ऊँची आवाज़ में बोला– 'गुरू लाधो रे – गुरू लाधो रे'। छत से उतर कर अपने ठिकाने की तरफ दौड़ता जा रहा था और साथ ही बोल रहा था–'गुरू लाधो रे गुरू लाधो रे गुरू लाधो रे गुरू लाधो रे' अपने ठिकाने पर जा कर गुरू साहिब जी के लिए तैयार की गई पोशाक, दसवन्ध की रकम और 500 मोहरों की थैली एक थाल में रख कर गुरू साहिब जी के स्थान पर आकर उन्हे भेंट की। गुरू साहिब जी ने तीन बार कहा,''धन सिखी, धन सिखी, धन सिखी''।

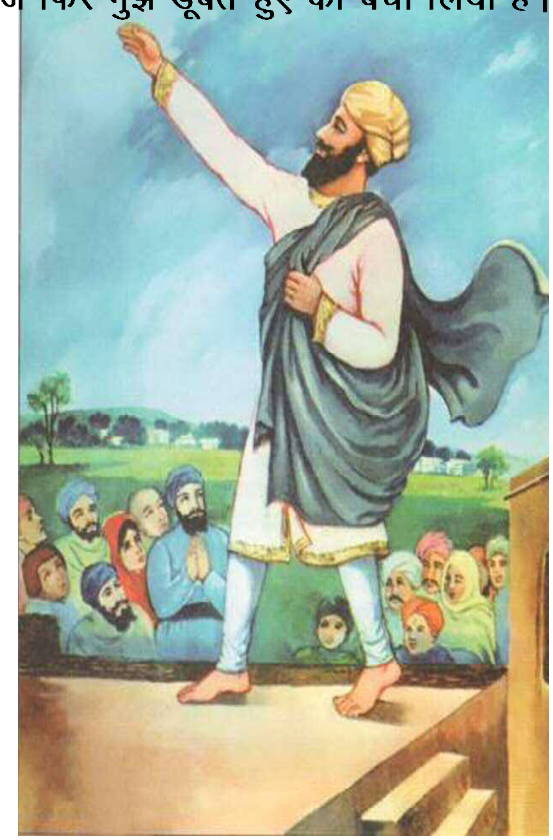

****

'धीर मल का हमला'

गुरू तेग बहादर साहिब जी के प्रकट होने के बाद एक दो दिनों में ही कुछ कच्चे पिल्ले सोढी तो अपनी दुकानें बन्द करके दौड़ गए। सारी संगत गुरू तेग बहादर साहिब जी के स्थान पर जाने लगी। दूर और नज़दीक से आने वाली संगतो ने तोफहों और माया के ढेर लगा दिए। धीर मल यह सब कुछ देख जल रहा था। गुरू जी के निंदकों की टोली का आगू , शीहां नाम के मसंद था। वह धीर मल के हर समय कान भरता रहते था कि बाबा गुरदिता जी के बड़े पुत्र तो आप हो, गुरू हरिकृशन साहिब जी के रिश्ते में सगे बाबा भी आप हो, गुरूओं की बाणी की बीड़ भी तुम्हारे पास है, फिर गुर–गद्दी उनके पास कैसे चली गई? वह यह नहीं जानता था कि 'बाबा' रिश्ते वाला बाबा नहीं बल्कि 'बाबा नानक' वाला 'बाबा' कह कर गये हैं, गुरू हरिकृशन साहिब जी। शीहें मसंद ने यह भी कहा कि 4–5 दिनों में ही गुरू तेग बहादर साहिब जी के पास इतनी माया इकट्ठी हो गई है, जितनी आप के पास कई सालों तक नहीं हो पायेगी। इस लिए संगतों को पता लगने से पहले ही इस गुरू को खत्म कर देना चाहिए। किसी किसी विद्वान ने यह भी लिखा है कि एक बार धीर मल ने यह कहा कि जान से मारने की बजाए जो मर्जी करो, पर शीहें मसंद ने कहा कि जान से मारे बिना बात नही बनेगी। बार बार कहने पर धीर मल ने सहमति दे दी। मारने की तैयारी कर ली गई, केवल मौके की तलाश थी।

एक दिन गुरू तेग बहादर साहिब जी कुछ संगत को लेकर जंगल की तरफ घोड़ों पर निकले। धीर मल के साथी यह उचित समय समझ कर बकाले के बाहर पेड़ों के पीछे बन्दूकें लेकर बैठ गये। वापिसी पर गुरू साहिब जी की तरफ निशाना बना कर गोलिओं की बौछार कर दी। ' जिस दा साहिब डाढा होये।। तिस नू मार न साकै कोये।।' के महावाक अनुसार दुश्मनों द्वारा चलाई गई गोलिओं में से ना तो कोई गोली गुरू साहिब जी को छू सकी ना ही किसी सिख का कोई नुकसान कर सकी। इस हमले के बाद भी गुरू साहिब जी अडोल थे। बिल्कुल शांत चित। गुर सिखों भी शांत रहने के लिए कह कर गुरू साहिब जी छत पर आराम करने के लिए चले गये। पर धीर मलिए तो अशांत थे। धीर मल को खबर मिली कि गुरू साहिब जी अकेले छत पर चढ़े हुए हैं। वह 10–15 बंदूकबाजों को ले कर उनके स्थान पर जा घुसा मसंद शीहें ने साथ की छत पर चढ़ कर गुरू साहिब जी के माथे के निशाना बना

कर गोली चलाई जो गुरू साहिब जी के माथे को छू कर निकल गई। माथा खून से लथपथ हो गया। धीर मल भी छत पर जा चढ़ा – बोल कुबोल बोलने लगा। इतनी देर में माता जी भी वहां आ गये। गुरू साहिब जी तो "भय काहूँ को देत नहि नहि भय मानत आन" के अपने बचनों के अनुसार शांत खड़े थे, पर माता जी ने आगे आ कर धीर मल को ताड़ना करते हुए कहा,"तू कौन होता है करतारपुर से आ कर कड़वे बोल बोलने वाला। तेरे पास शक्ति थी, तो तू वहीं संगत बुला लेता। यह जो जोर दिखा रहा है, यही ज़हर बन कर तुम्हें ले बैठेगा। माता नानकी जी ने आगे बढ़ कर गुरू साहिब जी के चेहरे से अपने पल्लू के साथ खून साफ किया। जितना समय वह ऊपर रहे उतने समय में उसके साथी नीचे से भेटाएं, माया, सामग्री और अन्य कीमती वस्तुएं उठा कर ले गये।

कुछ सिखों ने इस घटना का वृत्तांत मक्खण शाह को सुनाया। उसने कहा कि गुरू साहिब जी तो 'ताण होंदे होए निताणा, माण होंदे होए निमाणा' अनुसार शांत ही रहेंगे, हमें ही उसको सीधा करना पड़ेगा। उसने अपने सारे सिपाही और संगत को साथ लेकर धीर मल के डेरे पर हल्ला बोल दिया। भाई मक्खण शाह के घोड़ स्वारों और शस्त्रधारी सिपाहिओं को देख कर उन्होंने हाथ खड़े कर दिए। शीहें मसंद को हाथ पैर बांध कर (मुशकें बांध) ले गये। धीर मल को नंगे पैर ही चलने को कहा। लूटे हुये सारे सामान को धीर मल के साथियों के सिरों पर लदवा कर गुरू दरबार में ले गये। बहुत ही सत्कार सहित पोथी साहिब की बीड़ भी ले गये। जब वह गुरू साहिब जी के पास पहुँचे तो उन्होंने माफी मांगी। गुरू साहिब जी ने कहा," इन्हों ने यह सब कुछ लालच और ईर्ष्या वश किया है, इन को छोड़ दो और सामान भी इनको दे दो। यही सामान ही इन को अपनी गलती का अहसास करवाता रहेगा। भाई मक्खण शाह ने कहा,' गुरू साहिब जी, इन्होंने आपजी पर गोली चला कर घोर अपराध किया है, इस लिए इन को क्षमा नहीं करना चाहिए। गुरू साहिब जी ने कहा,"क्षमा सब से बड़ा तप है, क्षमा धर्म का गुण भी है और दान भी। जब कि अपराधी को सज़ा देना क्रोध का दूसरा रूप है, जो बदले की आग में से पैदा होता है। दूसरी बात – गुरू महाराज ने धन के कारण हमें यह दुकान नहीं बना कर दी।" भाई मक्खण शाह ने गुरू साहिब जी का हुक्म मान कर सब को छोड़ दिया और सारा सामान भी वापिस कर दिया।

****

'माईआं रब्ब रजाईआं – भगती लाईआं'

गुर–गद्दी पर विराजमान होने के बाद गुरू तेग बहादर साहिब जी अमृतसर श्री दरबार साहिब दर्शन करने गये। उस समय श्री दरबार साहिब का प्रबन्ध प्रिथी चन्द की वंश के पास था। सोढी मेहरबान का पुत्र हर जी सातवां गुरू बन कर बाणी की रचना करके दरबार साहिब के अन्दर रबाबिओं से गायन करवाने लग गया। जब उसको गुरू तेग बहादर साहिब जी के अमृतसर आने की खबर मिली तो उसने मसंदों को कह कर दरबार साहिब के दरवाज़े बन्द करवा दिए। गुरू साहिब जी ने अकाल तख्त के पास एक थड़े पर कुछ समय बैठ कर दूर से ही श्री दरबार साहिब के दर्शन किये। अपने आप को बेकसूर साबित करने के लिए हर जी उनके पास आया भी था कि दरबार साहिब के दरवाजे बन्द करने में उसका कोई हाथ नही। उस समय गुरू साहिब जी ने जो बचन कहे वह इतिहास में दर्ज है:

"नहि मसंद तुम अमृतसरीये।
तृष्नागन ते अन्तर सड़ीये।"

गुरू साहिब जी ने सरोवर में स्नान करने उपरन्त वहां थड़े पर ही दीवान सजा दिया। दीवान के बाद भाई मक्खण शाह ने विनती की कि गुरू साहिब जी आज्ञा दो तो इन को भी सबक सिखा दें। गुरू साहिब जी ने कहा,'मक्खण शाह इनको लालच की अग्नि सता रही है, जिस के कारण कोई ज्ञान और कोई जप तप या कोई अन्य सबक उन को नही समझा सकता। इतने कह कर गुरू साहिब जी वहां से वल्ला गांव की ओर चल पड़े। गुरू साहिब जी के जाने के बाद मसंदों ने दरवाजे खोल दिये। भाई मक्खण शाह और बाकी संगत ने दर्शन किये। मक्खण शाह ने मसंदों से कहा कि गुरू साहिब जी कब्जा करने नहीं आए थे। तुम अब भी मौका संभालते हुए गुरू साहिब जी से माफी मांग लो। पर उन पर कोई असर ना हुआ।

गुरू साहिब जी वल्ला गांव में एक पीपल के पेड़ के नीचे जा विराजे। वहां की एक माई, जिस का नाम हरिया था, गुरू घर की श्रद्धालु थी, अपने घर ले गई। माई हरिया ने गुरू साहिब जी की बहुत सेवा की। गांव की और भी संगत वहां आकर जुड़ गई। जो भी आता, कुछ ना कुछ भेंट करता। गुरू साहिब जी ने खुश हो कर गांव को वर दिया," वल्ला – गुरू का गल्ला" इतनी देर में भाई मक्खण शाह जी के साथ अमृतसर की कुछ माईआं आ पहुँची । उन्होने मसंदों द्वारा की गई भूल की माफी मांगी। गुरू साहिब जी ने उनको आशीर्वाद दिया, "माईआं रब रजाईआं, भगती लाईआं" तीन दिन गुरू साहिब जी वल्ला गांव में ठहरे।

****

'एक बचन भविष्य का किया'

वल्ला गांव से गुरू साहिब जी ने पहला प्रचार दौरा आरम्भ किया। वह हर उस स्थान पर गये, जिन का बड़े गुरू साहिबान के साथ सम्बन्ध था। सारे श्रद्धालु सिखों को मिलते। तरनतारन साहिब पहुँच कर कोहड़िओं के स्थान पर जा कर हाथों से सेवा की। माता भानी जी के कुएँ के भी दर्शन किए। वहां से खडूर साहिब जा कर दीवान सजाए। संगत गुरू साहिब जी के दर्शन करने के लिए उमड़ पड़ी। गोईंदवाल साहिब से गुरू अमरदास साहिब जी की वंश से बाबा द्वारका दास जी आप आ कर उनको गोईंदवाल साहिब ले गये। यहां कई दिनों तक दीवान सजते रहे। यहां से गुरू साहिब जी नज़दीक नज़दीक के स्थानो पर जाते रहे। गुरू नानक साहिब के चोले के भी दर्शन करने गये, यह चोला गुरू साहिब जी ने मक्के की यात्रा के समय पहना था। गोईंदवाल में सजे दीवानों भाई मूल चन्द (मूला क्षत्री) का पुत्र रघुपत राय गुरू साहिब जी को मिलने आया और विनती करके अपने नगर खेमकरन ले गया। वहां सिखों ने बहुत श्रद्धा के साथ सेवा की। गुरू साहिब जी यहां 15 दिन विराजे, रोज़ दीवान सजाते और संगत को उपदेश देते। यहां के एक सिख भाई रत्न चन्द धिन्गाणा जी की श्रद्धा इतनी थी कि उसने विनती की कि गुरू साहिब जी, मेरे पर इतनी कृपा कर देना कि जिस दिन आप जी ज्योति जोत समाओ, वह दिन मेरी ज़िंदगी का भी आखिरी दिन हो। इसी तरह ही हुआ। जिस दिन गुरू साहिब जी को दिल्ली में शहीद किया गया, उसी दिन वह एक चादर ओढ़ कर लेट गये और गुरू चरणों में जा विराजे।

गुरू साहिब जी खेमकरन से वापिस गोईंदवाल साहिब आ गये। कुछ दिन रुक कर ब्यास दरिआ पार करके सुलतान पुर पहुँचे। यहां गुरू नानक साहिब जी के साथ सम्बंधित सभी स्थानों पर श्रद्धा के फूल भेंट किये। यहीं से मालवे की फेरी दौरान लॅखी जंगल के इलाके की संगत को 'जीअ दान' दे कर 'भक्ति' के साथ जोड़ते हुए तलवंडी साबो जा कर डेरा किया। यहां गुरू साहिब जी ने एक टिंबे के नीचे विराजमान हुए। एक सिख ने विनती की, '' गुरू साहिब जी, आपजी नीचे स्थान पर आकर विराजे हो, ऊँचे स्थान पर डेरा करने की कृपा करो।'' गुरू साहिब जी ने बचन किये,''आप देखोगे, एक दिन ऊँचे स्थान पर डेरा करने वाला भी आयेगा। यह स्थान बहुत बड़ा स्थान होगा। सुनहरी कलशों वाले ऊँचे सुंदर मन्दिर बनेगे। यह स्थान विद्वानों की पाठशाला 'गुरू की काशी' बनेगी। गुरू तेग बहादर साहिब जी के यह बचन 'दशमेश पिता जी' के समय सच्च साबित हुए।

****

'माखोवाल सुहावना गुर सतगुर को अस्थान'

गुरू साहिब जी तलवंडी साबो की धरती पर 15 दिन ठहरे। यहां मालवे के कई गांवों और नगरों में लोगों का उद्धार करते, गुरमत प्रचार करते और तपते ह्रदयों को शीतल करते हुए गुरू साहिब जी धमतान (जींद) .पहुँचे। यहां गुरू साहिब जी ने बैसाखी मना कर खटकड़, घुड़ाम और लखनौर आदि गांवों और इलाकों की संगत को गुरमत के उपदेश देते और सिखी के साथ जोड़ते हुए कीरतपुर पहुँच गये। यहां बाबा सूरज मल जी के सपुत्रों ने उनका स्वागत किया और बहुत आदर सत्कार किया।

गुरू साहिब जी यहां दीवान सजाते और संगत के साथ बचन भी करते। साथ ही वह इन सुहावनी वादियों मे एक ऐसा ठिकाना बनाने के बारे में सोच रहे थे, जहां से एक ऐसे पंथ पैदा होना था, जिस के बारे में गुरू नानक साहिब जी ने 'ना हम हिन्दू ना मुसलमान' का संदेश दिया था। इस लिए वह ऐसी जगह की तलाश में मुखी सिखों को साथ ले कर आस–पास की पहाड़ियों की ओर चले जाते। गुरू साहिब जी के कीरतपुर निवास दौरान कहलूर रियासत का राजा दीप चन्द चढ़ाई कर गया था। इन की राजधानी बिलासपुर थी। यह राजा तारा चन्द का बेटा था जिस को गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने ग्वालियर के किले से रिहा करवाया था। जब राजा दीप चन्द की रानी चम्पा बाई को यह पता चला कि गुरू साहिब जी कीरतपुर में आये हुए हैं तो उसने अपने पति की रस्म क्रिया पर पहुँचने के लिए संदेशा भेज कर विनती की। वह गुरू घर की बहुत श्रद्धालु थी। क्रिया वाले दिन गुरू साहिब जी अपने साथ माता नानकी जी, दीवान दरगाह मल और कुछ सिखों को लेकर गये। भोग के बाद गुरू साहिब जी ने रानी चम्पा बाई के साथ बातचीत करते हुए बताया कि वह कीरतपुर के ऊपर की तरफ एक नये नगर का निर्माण करना चाहते हैं। इस लिए कहलूर के इलाके में कोई जगह खरीदने की इच्छा है।

रानी ने अपने वज़ीरों के साथ सलाह करके माखोवाल का इलाका भेंट के रूप में स्वीकार करने की विनती की। गुरू साहिब जी ने बड़े आदर के साथ ज़मीन भेंट स्वरूप लेने से मना कर दिया। उन्होंने पांच सौ रुपये दे कर माखोवाल की ज़मीन का पट्टा अपने नाम लिखवा लिया। दीवान दरगाह मल जी की शोभा बढ़ाने के लिए कहा कि वह उस स्थान को चुने जहां नये नगर का निर्माण कार्य शुरू करवाना है। नज़रों की बख्शिश तो गुरू साहिब जी ने ही करनी थी। तीन चार दिनों में कुछ गुरसिखों को साथ लेकर उन्होने

माखोवाल के सारे इलाके का निरीक्षण कर लिया। अपने द्वारा चुने गये स्थान के बारे में उन्होने गुरू साहिब जी को बताया। माता नानकी जी, दीवान दरगाह मल जी और कुछ गुरसिखों को साथ लेकर गुरू साहिब जी वह जगह देखने के लिए गयें जहां नगर बसाया जाना था। गुरसिखों की शोभा बढ़ाने वाले सतगुरू जी ने उनके द्वारा चुनी हुई जगह को प्रवानगी दे दी। नये नगर की आधारशिला (मोढ़ी गाड़ने) की रस्म के लिए 19 जून 1665 ई. का दिन निश्चित किया गया। विक्रमी संवत अनुसार उस दिन 21 आषाड़ 1722 का दिन था।

सारी संगत को हाज़िर होने के लिए संदेशे भेज दिए गये। बाबा बुड्ढा जी वंश में से भाई भाना जी की पोते भाई गुरदिता जी को विशेष तौर पर हाज़िर होने की विनती की गई। निश्चित दिन से पहले ही संगत कीरतपुर साहिब पहुँच गई। नये नगर की आधारशिला माखोवाल के पुराने थेह के ऊपर सरोटे गांव की ज़मीन पर रखी जानी थी। उस के नज़दीक तम्बू लगा कर दीवान सजाए गये। दीवान की समाप्ति पर भाई गुरदिता जी ने अरदास की। पहले 6 गुरू साहिबान जी की ओर से बाबा बुड्ढा जी के अदब सत्कार को कायम रखते हुए भाई गुरदिता जी से आधारशिला रखने की रस्म पूरी करवाई। इस नये नगर का नाम 'चक्क नानकी' रखा गया। नगर के निर्माण के लिए कुशल कारीगर बुलाए गये। उनको मानचित्र (नक्शा) गुरू साहिब जी ने आप समझाया। गुरसिखों के लिए घर बनाने की जगह अलग रखी गई। व्यापारियों की विनती पर बाज़ार के लिए योजना बनाई। रंग रोगन के लिए चित्रकार बुलाये गये। आखिर एक अनुपम नगर तैयार होना है, जहां पर अकाल पुरख की आज्ञा से एक पंथ चलाया जाना है।

एक समय था जब 'माखो' नाम का राक्षस रूपी डाकू से डरता हुआ कोई माखोवाल में ठिकाना नहीं बनाता था, और एक समय है कि गुरू साहिब जी के चरण स्पर्श से पवित्र हुई धरती पर लोग जगह लेने के लिए विनतियां कर रहे हैं। गुरू साहिब जी नगर निर्माण का कार्य बाबा बुड्ढा जी जी की वंश में से भाई झंडा जी को सौंप कर आप प्रचार यात्रा पर चले गये।

****

'मुर पित पूरब कीयस पियाना'

दशमेश पिता श्री गुरू गोबिन्द सिंघ साहिब जी ने अपनी आत्म कथा 'बचित्र नाटक' में यह बचन लिखे हैं: ''मुर पित पूरब कीयस पियाना।। भांति भांति के तीरथ नाना।।'' गुरू तेग बहादर साहिब जी की प्रचार यात्राओं के बारे में कुछ विद्वानों की खोज के आधार पर सब ने यह माना है कि गुरू नानक साहिब जी के बाद यह नौवें पातशाह जी ही थे, जिन्हों ने बहुत लंबी यात्रा करके सिखी को प्रफुल्लित किया। इन्ही खोजों से यह भी ज्ञात हुआ कि गुरू तेग बहादर साहिब जी उन तीर्थो पर भी गये जहां गुरू नानक साहिब जी ने भूले–भटके लोगों को सीधी राह दिखाई। एक विद्वान ने इन यात्राओं की व्याख्या इस तरह की है,'' गुरू नानक साहिब जी ने सिखी का जो पौधा संसार भर में लगाया, उस के पोषण और सींचने की ज़िम्मेंवारी गुरू तेग बहादर साहिब जीने उठाई। फर्क सिर्फ यह था कि गुरू नानक साहिब जी के साथ केवल बाला जी और मरदाना जी थे परन्तु गुरू तेग बहादर साहिब जी के साथ सिखों के इलावा परिवार भी था।

'चक्क नानकी' जी के निर्माण कार्य का दायित्व भाई झंडा जी की अगवाही में सिखों को सोंप कर और सब को ज़िम्मेंवारी संभाल गुरू तेग बहादर साहिब जी ने पूरब देश का दौरा करने के विचार बनाया। कहलूर की रानी यात्रा के बारे में सुन कर गुरू साहिब जी को मिलने आई और उनसे सेवा पूछी। गुरू साहिब जी ने रानी को उनके जाने के बाद नगर का ख्याल रखने और गुर सिखों की देख–रेख की जिम्मेंवारी सौंपी।

माता नानकी जी, उनके महल माता गुजरी जी, भाई कृपाल चन्द जी, भाई मती दास जी, भाई सती दास जी और कई सिखों ने भी साथ जाने की तैयारी कर ली। दोनो माता साहिबान के लिए रथ तैयार करवाये गये। चक्क नानकी जी से गुरू तेग बहादर साहिब जी ने अरदास करके यात्रा आरम्भ की। सारे सफर दौरान भाई मती दास जी ने सब के लिए रिहाइश और लंगर के प्रबन्ध करने की जिम्मेंवारी निभाई। यह सारा जत्था (समूह) कीरतपुर, रोपड़, बसी पठाणा, मुकारो पुर और टहल पुर से होते हुए सैफाबाद (बहादर गढ़, पटियाला) पहुँचा। यहां नवाब सैफ खान गुरू घर का बहुत श्रद्धालु था। गुरू साहिब जी यहां कई दिन रुके। नवाब ने अपने किले के बाहर अपने बाग में गुरू साहिब जी का डेरा करवाया। वह प्रति दिन नंगे पांव चल कर गुरू साहिब जी के दर्शन करने आता रहा। उसने गुरू साहिब जी की बहुत सेवा की। विदायगी के समय गुरू साहिब जी को एक अरबी नस्ल का सफेद घोड़ा भेंट किया। सैफ खान ने इस का नाम 'श्री धर' रख कर इसको इसने गुरू साहिब जी के लिए बड़े प्यार से पाला था। सैफाबाद से चल कर गुरू जी

कैथल, पेहोवा से होते हुए कुरूक्षेत्र पहुँचे। सूर्य ग्रहण के समय स्नान करने के लिए बहुत यात्री पहुँचे हुए थे। कई दिन यहां गुरू साहिब जी ने डेरा करके दीवान सजाये और वहमों भरमो से मुक्त होने का मार्ग दिखाया।

कुरूक्षेत्र से चल कर हर 10–15 मील की दूरी पर रुकते हुए यह जत्था मथुरा पहुँचा। मथुरा से आगरा, आगरे से इटावा, इटावा से प्रयागराज पहुँचे। इस को आजकल इलाहाबाद कहा जाता है। यहां तीन नदियों का संगम होता है – गंगा, यमुना और सरस्वती। तीनों नदियों के संगम को त्रिवेणी कहा जाता है। यह हिन्दू धर्म का महान तीर्थ है। यहां गुरू साहिब जी लगभग एक महीना रहे। यहां उनकी याद में गुरूद्वारा पक्की संगत स्थापित है। 'बचित्र नाटक' में भी दशमेश पिता जी ने इस त्रिवेणी का जिक्र किया है: ''जब ही जात त्रिवेणी भये।। पुन दान दिन करत बितये।।''

इलाहाबाद की संगत से विदायगी लेकर गुरू साहिब जी मिरज़ापुर आ गये। यहां कुछ दिनों तक संगत को जोड़ कर उपदेश देते रहे। यहां से गुरू साहिब जी बनारस पहुँचे। गुरू नानक साहिब जी के समय से जी यहां सिख संगत कायम हो चुकी थी। भाई गुरदास जी भी कुछ समय यहां रहे थे। गुरू तेग बहादर साहिब जी 7 महीने 13 दिन यहां रहे। यहां पहुँचने के समय गुरू साहिब जी ने जो चोला पहना हुआ था, वह अब गुरूद्वारा 'बड़ी संगत' में सुरक्षित है। उस समय यहां की संगत के नाम गुरू साहिब जी के हुकमनामें भी लिखे हुए मिलते हैं। गुरू साहिब जी का घोड़ा 'श्री घर' यहां बीमार पड़ गया। भाई जवेहरी जी के नाम 'श्री धर' की देखभाल, उसकी दवाई और ठीक होने पर उसे पटना पहुँचाने का हुकमनामा है। बनारस की संगत के नाम अन्य हुकमनामे भी हैं जिनमें वहां के गुरसिखों के नाम शामिल हैं। यह हुकमनामें पटना साहिब में सुरक्षित हैं।

गुरू साहिब जी बनारस से ससराम पहुँच गये। यहां गुरू साहिब जी अपने श्रद्धालु सिख भाई फग्गू के सच्वे प्रेम और भक्ति से आकर्षित होकर आये। उसने अपने घर का दरवाजा बहुत ऊँचा रखवाया था क्योंकि उसके मन की यह भावना थी कि गुरू साहिब जी उसके घर घोड़े पर चढ़ कर ही अन्दर दाखिल हों ताकि उनको घर के बाहर घोड़े से ना उतरना पड़े। इसी कारण वह घर का दरवाजा बन्द नहीं करते थे। गुरू जी ने उसके मन की भावना पूरी की। यहां कुछ दिन बिताने के बाद गुरू साहिब जी गया चले गये। यह फलगू नदी के तट पर हिन्दुओं का तीर्थ स्थल है। पहले यह बौद्ध धर्म का एक पवित्र स्थान था। गया से पटना शहर जाते समय गुरू साहिब जी ने 'कर्मनाशा' नदी में स्नान किया। वहां के पंडितों ने गुरू साहिब जी और गुरसिखों को बताया कि इस नदी में स्नान करने से पुण्य कर्म नष्ट हो जाते

हैं, इस लिए यहां स्नान ना करें। गुरू साहिब जी ने उन्हें समझाया कि किसी नदी में नहाने या ना नहाने से कर्मों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यहां हम प्रभु का गुणगान करेंगे, शब्द कीर्तन करेंगे। सत्संग के प्रभाव से यहां 'कु–कर्मनाश' हो जाया करेंगे।

इस स्थान से चल कर गुरू साहिब जी 'राजग्रही' शहर में एक पड़ाव के बाद मई, 1666 ई. में पटना शहर पहुँचे। यह गंगा के किनारे बसा एक प्राचीन शहर है। उस समय इसका नाम 'पाटलि पुत्र' था। इस शहर में गुरू साहिब जी ने सबसे पहले एक बगीचे में इमली के पेड़ के नीचे विराजे। यह बगीचा सूखा पड़ा था, जो गुरू साहिब जी के चरणों के स्पर्श से हरा भरा हो गया। आजकल इसे गुरू का बाग के नाम से जाना जाता है। यहां से भाई जगता जी गुरू साहिब जी को अपने घर ले गये। इस स्थान पर अब गुरूद्वारा गऊ घाट बना हुआ है। यहां दीवान सजने शुरू हो गये। संगत दूर दूर से दर्शन के लिए आती थी। कीर्तन उपदेश सुन कर आनंदित होती थी। यहीं पर बंगाल की संगत दर्शन के लिए आई। गुरू नानक नाम लेवा संगत की ढाके में बहुत आबादी थी। जब उन्होंने वापिस जाने की अनुमति मांगी तो उन्होंने विनती की हमारे इलाके को चरण स्पर्श करके पवित्र करो।

वर्षा ऋतु का चौमासा गुरू साहिब जी ने पटना में अपने परिवार के साथ बिताया। जब वर्षा थम गई, तो उन्होंने मुखी गुरसिखों और माता नानकी जी को कहा कि आसाम की संगत हमारी प्रतीक्षा कर रही है। इस लिए हमारी यात्रा की तैयारी की जाए। भाई मती दास, भाई सती दास, भाई गुरदिता जी और कीर्तनी जत्थें को भी तैयारी करने का आदेश दिया। माता नानकी जी ने भाई कृपाल चन्द और भाई दयाला जी को साथ लेकर आसाम की यात्रा पर ना जाने का अनुरोध किया। गुरू साहिब जी ने कहा कि संगत बहुत उत्सुक है, लंबे समय से प्रतीक्षा कर रही है। इस लिए जाना आवश्यक है। भाई कृपाल चन्द, भाई दयाला जी और पटने के संगत में से भाई दरिया, भाई दरबारी, भाई मेहर चन्द और माई पैड़ी जी को परिवार की जिम्मेंवारी सौंप कर अक्तूबर 1666 ई. में ढाका की अगली यात्रा पर चल पड़े।

पहला डेरा गंगा के किनारे बसे एक कसबे बडगांव में किया। यहां गुरूद्वारा बड़ी संगत और छोटी संगत बना हुआ है, इस स्थान पर एक पुरातन जन्म साखी भाई पैड़े मोखे की हस्त लिखित आज भी संभाली हुई है। इस स्थान से चल कर गुरू साहिब जी ने मुंगेर नगर में डेरा किया। कई दिन तक गुरू साहिब जी वहां दीवान सजाते रहे। यहां से ही हुकमनामा पटने की संगत के नाम भेजा, जिस में भाई दयाल दास जी को परिवार का पूरा ध्यान रखने और संगत को भाई दयाल दास जी की हर बात मानने का आदेश दिया गया।

यहां भी अब गुरूद्वारा पक्की संगत बना हुआ है। यहां से साहिबगंज, भागलपुर, राज महल में से होते हुए कई गांवों की संगत का उद्धार करते हुए मालदा नगर पहुँचे। यह नगर हीरों के व्यापार के लिए प्रसिद्ध है। सिख व्यापारियों ने कीमती हीरे गुरू साहिब जी को भेंट किये। गुरू साहिब जी जानते थे कि यह स्थानीए लोगों का अनुसरण करके किसी फकीर की कब्र पर माथा टेकने जाते हैं। गुरू साहिब जी ने उनको समझाया कि कब्रों पर मन्नतें मानना सिखी सिद्धांत के विरुद्ध है, गुरू परमेश्र का ध्यान धर कर अरदास करने मात्र से ही मन्नतें पूरी हो जाती हैं। उनको यह भी कहा कि तुम्हारी यह कीमती भेटाएं हम तभी प्रवान करेंगे यदि तुम कब्रों पर जा कर माथा रगड़ने से तौबा करोगे।

मालदा से ढाके तक का लगभग 250 मील का सफर तय करते हुए गांवो और नगरों में सिखी का प्रचार करते हुए गुरू साहिब जी चलते जा रहे थे। रास्ते में अन्य संगते भी उनके जुड़ती और कुछ समय साथ सफर करती। फिर गुरू साहिब जी उन्हें वापिस भेज देते थे। गुरू नानक साहिब जी की उदासी के समय से जुड़ी हुई सिख संगतों में आई बुराइयों को दूर करते हुए गुरू साहिब जी ढाके पहुँच गये।

गुरू नानक साहिब जी ने अपनी पहली उदासी के दौरान ढाका में संगत कायम कर दी थी। उस समय ढाका को जहांगीरा बाद कहा जाता था। बाद में संगत ने इस स्थान पर एक धर्मसाल का निर्माण कर दिया था। जब गुरू अमरदास जी ने 22 प्रचारक मंजिओ स्थपित की, तो एक मंजी ढाका की संगत को बख्शी। गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने भाई अलमस्त जी को सिखी का प्रचार करने के लिए यहां भेजा। वह प्रचार केन्द्र में मुखी की कमी को पूरा करते हुए सिखी सिद्धांतों का उपदेश देते रहे। जब गुरू साहिब जी ने उन्हें वापिस बुलाया तो उन्होंने जाते समय भाई

नथा जी को उपदेशक नियुक्त किया। अब वही गुरू तेग बहादर जी के समय तक प्रचार करते थे। वह सिखी सिद्धांतो को पूर्ण रूप में अपनाने के बारे में बहुत सख्त थे। वह अक्सर कठोर भी बोलते थे। गाली गलोच तो उनके लिए साधारण सी बात थी। अगर कोई मन की मति अनुसार चलता दिख जाता तो उसको हटाते समय बहुत गुस्से में आ जाते। गाली गलोच करने लग जाते। संगत ने गुरू साहिब जी के पास उनकी शिकायत कर दी। गुरू तेग बहादर

साहिब जी ने संगत को समझाया कि वह हृदय के बहुत शुद्ध हैं। उनके मन में किसी के प्रति कोई ईर्ष्या नहीं है। संगत की तसल्ली करवाने के लिए उन्होंने भाई नथा जी को संगत के सामने ही बुला लिया और उस से पूछा कि जब तुम प्रचार करते हो तो संगत को गालियां क्यों निकालते हो? भाई नथा जी ने आदत अनुसार बड़ी सी गाली निकाल कर कहा,' कौन है जो ऐसा कह रहा है।' यह सुन कर गुरू साहिब जी हंसने लगे और संगत को समझाया कि यह हमारा निष्कपट सीधा साधा फकीर है, इसकी बातों का बुरा ना माना करो। इसकी तो गालियाँ भी ही भला करेंगी। 'महिमा प्रकाश' में यह घटना दर्ज है: ''बहो हसे दयाल सिखन समझाया।

नथे की गाल जानो तुम दया।
इह हृदय सुध बैर नहीं जाने।
हमरा बचन सत कह माने।
इह सूधा फकीर सूधी करे बात।''

यहां से भाई बुलाकी दास जी ने गुरू साहिब जी को अपने घर आने का अनुरोध किया। गुरू साहिब जी ने कहा कि हम ने आप के घर आना ही था। बहुत समय से आप की माता जी की प्रेम डोरियाँ हमें बहुत समय से आकर्षित कर रही हैं। भाई बुलाकी दास की माता जी ने अपने हाथों से बहुत महीन सूत कात कर बस्त्र बनाए थे। गुरू साहिब जी के लिए एक सिंहासन सजाया हुआ था। प्रति दिन वह आसन की चादर बदलती और गुरू साहिब जी के आने का इंतज़ार करती रहती कि कब गुरू साहिब जी आएं और इस आसन को पवित्र करें। उसके द्वारा बनाए हुए वस्त्र अंगीकार करें। एक दिन गुरू साहिब जी बुलाकी दास जी के घर उनके साथ गये और सीधे उस कमरे में चले गए जहां माता प्रतीक्षा में बैठी थी। गुरू साहिब जी आसन पर बैठ गये। वस्त्र पहने और माता की श्रद्धा पूरी की। माता जी ने एक जी साँस में कई प्रश्न पूछ लिए, जैसे वह बहुत समय से सोच कर बैठी हो – ''महाराज जी, मन भटकता है? इधर उधर भागता है, कैसे समझाऊँ? कैसे मोक्ष प्राप्त करूँ? कैसे प्रभु से मिलूँ? सदैव दर्शन कैसे होते रहें? गुरू साहिब जी मुस्कराए! फिर नैन मूंद लिए! अंतर ध्यान की अवस्था में चले गये! फिर इलाही बाणी का उच्चारण विस्माद अवस्था मे अपने मुखड़े से किया:–

गौड़ी महला ९ (पावन अंग 219)

कोऊ माई भूलयो मन समझावै।।
वेद पुरान साध मग सुन कर निमख न हरि गुन गावै।। रहाओ।।
दुर्लभ देह पाए मानस की बिरथा जनम सिरावै।।
माया मोह महा संकट बन ता सिओ रुच उपजावै।।

अन्तर बाहर सदा संग प्रभ ता सिओ नेह न लावै।।
नानक मुकत ताहि तुम मानो जिह घट राम समावै।।

शब्द की सम्पूर्णता के बाद गुरू साहिब जी ने अपनी आंखें खोली। उन्होंने माता जी को सम्बोधित हो कर कहा,'' माता जी, इस भूले हुए मन को समझाइए कि साधुओं महापुरुषों के बचन सुन कर भी तू हरि के गुण नहीं गाता। इस तरह तेरी मानुष देह व्यर्थ चली जाएगी इस लिए प्रभु को सदा अंग संग समझ कर उनके साथ प्रेम कर। यह जो मोह माया प्रति तेरी रुची है, वही तो प्रभु मिलाप और तेरी मुक्ति के राह में संकट बन कर रुकावट डाल रहा है। यह बचन सुन कर भी माता जी ने विनती की,''सच्चे पातशाह! जब मेरा दिल चाहे, मैं आप के दर्शन कर सकूं, इस लिए आज्ञा दीजिए कि किसी चित्रकार को बुला कर आपकी तस्वीर बना कर रख लूं और जब भी मेरा मन करे, मैं आप के दर्शन कर सकूं। गुरू साहिब जी ने समझाया कि तस्वीर या मूर्ति शब्द का मुकाबला नहीं कर सकती। इस लिए तुम अपना मन शब्द में लगाया करो, पर माता जी तो अपनी ज़िद पर अड़ी रही कि 'दर्शन जब देखा चहै मूरत देखूं जाए'। माता जी की प्रीत और श्रद्धा को देखते हुए उन्हें चित्र बनाने की आज्ञा दे दी। भाई बुलाकी दास जी का ढाका में बहुत आदर सत्कार था।नवाब शाइस्ता खान भी उनकी बात मानता था। बुलाकी दास जी ने जाकर नवाब से एक अच्छे चित्रकार को भेजने का अनुरोध किया। जो गुरू साहिब जी का हूबहू चित्र बना सके। अगले दिन नवाब स्वयं उपहार लेकर दर्शन करने आया और अपने साथ एक प्रसिद्ध चित्र बनाने वाले को भी ले के आया। उसने चित्र बनाना शुरू कर दिया। तो उसने गुरू जी के चरण, कमल, हस्त, बाज और गुरू साहिब जी द्वारा पहने हुए वस्त्र तो चित्रित कर लिए पर चेहरे का प्रताप ना सहा जाए। कई दिन बीत गये लेकिन जब भी यह ब्रुश चलाना चाहे तो हाथ कांपने लग जाते। ब्रुश गिर गिर जाता। आखिर एक दिन गुरू तेग बहादर जी ने आप ही

ब्रुश लेकर अपना चेहरे चित्रित कर दिया। यह प्रसंग 'महिमा प्रकाश' ग्रंथ में इस तरह दर्ज है:

'बड़ा लिखारी लिआई माई। सतगुर हजूर तस्वीर लिखाई।
सगल अंग वस्त्र सुभ लिखा। मुख कमल प्रभ नहीं लिख सका।
देख दयाल कलम हथ लीना। निज हाथ सुधार सम्पूर्ण कीना।
तब मूरत माई को दीना।'

प्रिंसीपल सतबीर सिंध जी लिखते हैं," शायद यह किसी पैगम्बर का पहला अपने हाथ से बनाया चित्र (Self Portrait) है।" आजकल यह तस्वीर कलकता के विक्टोरिया अजायब घर में रखी हुई है। इसकी एक और खास विशेषता है कि जो हिस्सा चित्रकार ने बनाया है, उसका रंग फीका पड़ चुका है और कहीं कहीं से मिट भी चुका है। लेकिन गुरू साहिब जी द्वारा बनायें गये हिस्से की चमक दमक अब भी बरकरार है।

गुरू साहिब जी ढाका में संगत को उपदेश दे रहे थे, तभी भाई मेहर चन्द और भाई कल्याण चन्द जी पटना से खुशखबरी लेकर पहुँचे कि आपजी के घर पोह सुदी सप्तमी संवत 1723 विक्रमी (22 दिसंबर,1666 ईसवी) को एक बालक की बख्शिश हुई है। गुरसिखों के मुख से यह समाचार सुनते ही गुरू साहिब जी ने बालक का नाम गोबिन्द राय रखा और फुरमाया,"यह दुष्ट–दमन गुरू– देश का संकट दूर करेगा। उसी समय गुरू साहिब जी ने पटने की संगत के नाम हुकमनामे भेजे जिस में उन्होंने लिखा कि आप गुरू घर की खुशियों में शामिल हुए हो। गुरू परिवार को उतनी देर किसी बड़ी हवेली में रखना जितनी देर हरिमन्दर तैयार नहीं हो जाता।

गुरू साहिब जी के घर खुशियों की खबर ज्यों ज्यों संगत को पता चलती गई, त्यों त्यों बधाई देने के लिए संगत उमड़ पड़ी। संगत का उत्साह, प्रेम और श्रद्धा देख कर गुरू साहिब जी ने बचन किये,"मम सिखी का कोठा ढाका"। यहां गुरू साहिब जी एक वर्ष रहे। इस स्थान का नाम 'संगत टोला' रखा गया। नवाब शाइस्ता खान ने गुरूद्वारे के नाम पर जागीर लगवाई।

यहां ही राजा राम सिंह गुरू साहिब जी को मिलने आया। औरंगज़ेब ने इसको आसाम के मिशन को पूरा करने के लिए भेजा था। औरंगज़ेब इस पर ज्यादा विश्वास नहीं करता था। इस लिए उसने दोहरी चाल चलते हुए उसको इस मिशन पर भेजा था। राजा राम सिंह की जीत हो या हार, औरंगज़ेब का तो फायदा ही होना था। राजा राम सिंह ने गुरू जी को औरंगे की चाल के बारे में बताया। अगर मैं जीत गया तो सारा आसाम उसका और अगर मैं मारा गया तो मेरा राजपुताना उसका। उसने गुरू साहिब जी को आसाम अभियान में साथ चलने की विनती की। वह सोचता था कि अगर गुरू साहिब जी

फौजों के साथ होंगे तो फौजों का मनोबल ऊँचा रहेगा, दूसरा – आसाम की जादूगरनियों के जादू–टोने से बचाव रहेगा। गुरू साहिब जी ने उसके साथ जाने की सहमति भी दी और भरोसा भी दिया कि गुरू नानक अंग–संग हैं, जीत उसी की होगी। गुरू साहिब जी ने उसको नवाब शाइस्ता खान से मिलवाया। उसने राजा राम सिंह का स्वागत किया। उसने तोहफों के रूप में हाथी, घोड़े और हथियार तो दिए, साथ ही उसे इस इलाके के कुछ भेद भी बताए। यह भी समझाया कि ब्रह्मपुत्र दरिया के इलावा अन्य स्थानों का पानी ना पीना। औरतों से बच कर रहना।

गुरू साहिब जी ने ब्रह्मपुत्र पार करके धूबड़ी के स्थान पर डेरा किया। यहां अब गुरूद्वारा दमदमा साहिब है। राजा राम सिंघ की फौजों ने गुरू तेग बहादर साहिब जी के लिए जगह को ऊँचा करके ठिकाना बना दिया। उधर गोहाटी के राजे चक्रध्वज को फौजों की चढ़ाई के बारे में पता चला तो वह भी अपनी फौजें ले आया। उन्होने अपनी छावनी ब्रह्मपुत्र के दूसरी तरफ लगा

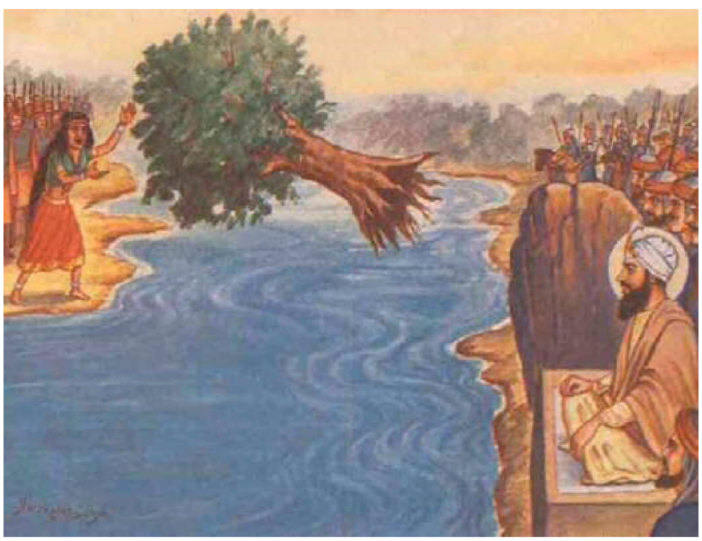

ली। गुरू साहिब जी उसकी नीति समझ गये कि वह रात के समय दरिया का प्रवाह बदल देंगे। उन्होंने राजा राम सिंह की फौजों को पीछे हटाने के लिए कहा। जब उसने फौजों को हुकम दिया तो उसकी फौजें तो पीछे हट गई, पर औरंगे के सिपाही अपने अंहकार में चूर रहे और पीछे ना हटे जिसका परिणाम यह हुआ कि जब आसाम की सेना ने रात को नदी का प्रवाह मोड़ा तो मुगल सेना के बहुर सारे हथियार, गोला बारूद और सैनिक बह गये। तब उन्हें कुछ अकल आई। फिर वह सभी गुरू साहिब जी की शरण में गये। गुरू जी ने उन्हें हौसला दिया और 'सतनाम' जाप करते रहने का हुकम दिया। महाराजा चक्रध्वज. ने 2–3 जादूगरनियां भी छोड़ी, जिन्होंने अपनी मन्त्र शक्ति का प्रयोग करके राजा राम सिंघ की सेना की ओर आग के गोले, बड़े बड़े पत्थर और पेड़ उखाड़ कर फैंके। पर उनका प्रभाव उनकी अपनी सेना पर ही होता रहा। जब यह सब बेकार हो गया तो चक्रध्वज ने 'कामाख्या देवी' की पूजा

अर्चना की। कहा जाता है कि देवी ने उसे स्वप्न में दर्शन दे कर गुरू तेग बहादर साहिब जी की शरण में जाने का हुकम दिया।

अगले दिन राजा चक्रध्वज अपनी माता जी को और बहुत सारे उपहार ले कर हाज़िर हुआ। गुरू साहिब जी के चरणों पर नमस्कार किया। गुरू साहिब जी ने राजा राम सिंह को भी बुला लिया। दोनो को समझाते हुए गुरू साहिब जी ने कहा,''तुम्हें आपस में नहीं लड़ना चाहिए। आपकी आपस की लड़ाई में कोई तीसरा फायदा उठा रहा है। तुम्हारा क्षत्रिय धर्म तुम्हें लड़ने की प्रेरणा देता है, मगर आपस में नहीं। भाई भाई की लड़ाई घातक होती है, और खानदान तबाह कर देती है। परिवार का यही सिद्धांत कबीलों और रिआसतों

पर भी लागू होता है। गुरू साहिब जी ने दोनो को गले मिलने को कहा। रिआसतों का समझौता गुरू साहिब जी ने एक खंजर अपने मुबारक हाथों में पकड़ कर जोर से दूर फैंक कर मारा और फैसला सुनाया कि खंजर के उस तरफ वाली रिआसत आसाम की और इस तरफ वाली रिआसत दिल्ली की। जिस स्थान पर खंजर गिरा उसे आज भी गुर खंजर पुर कहा जाता है।

गुरू साहिब जी उस स्थान पर भी गये जहां गुरू नानक साहिब जी भी अपनी आसाम यात्रा के समय रुके थे। सभी सैनिकों ने अपनी ढालों में मिट्टी भर कर उस स्थान पर ऊँचा करके एक थड़ा बनाया। यहां गुरू साहिब जी

आप कीर्तन उपदेश करते रहे। एक दिन राजा चक्रध्वज ने पूछा कि मैने कुछ हिन्दू फौजियों को दरिया में से पानी निकाल कर चुलियां करते और फिर अपने ऊपर से पानी फैंकते देखा है। इसके पीछे क्या सिद्धांत है? गुरू साहिब जी ने कहा कि इसका मकसद तो उनका स्वच्छ होना है। पर चुलियां पानी की नहीं, असली चुली ज्ञान, कुंवारपन, सबर, दान और न्याय की है, जो हमें बड़े गुरू – गुरू नानक साहिब जी अपने शब्द में समझा गये हैं। फिर गुरू साहिब जी ने उस शब्द का गायन किया,"नानक चुलिआं सुच्चीआं जे भर जाणै कोए।।" बाद में राजा चक्रध्वज ने इस स्थान पर एक गुरूद्वारा बनवा दिया। इस स्थान को अब तेग पुर कहा जाता है।

आसाम से फिर गुरू साहिब जी ढाका आ गये। वहां से दक्षिणी आसाम की यात्रा करते हुए रंगमती, मणीपुर से कलकते वाले रास्ते में अनेक स्थानों पर पड़ाव करते और संगत कायम करते हुए गुरू साहिब जी कलकता पहुँच गये। गुरू साहिब जी बैसाखी कलकता में मना कर आगे बालेश्वर और कंचनपुर से होते हुए रथ यात्रा के समय जगन्नाथ पुरी पहुँचे और अपना ठिकाना 'मंगू मठ' में किया। गुरू नानक साहिब जी का उपदेश दृढ़ कराते हुए आरती का गायन किया। उड़ीसा में ही गुरू साहिब जी को यह खबर मिली कि औरंगज़ेब ने अपनी धार्मिक नीति का एलान कर दिया है, जिस के अनुसार मन्दिर और गुरूद्वारे गिराए जा रहे हैं, पूजा पाठ करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। गुरू साहिब जी ने अब पंजाब आने का फैसला कर लिया। इस लिए वह भुवनेश्वर और कटक के रास्ते बहुत कम पड़ाव करते हुए पटना पहुँचे। सारे पटना निवासियों ने बहुत खुशियां मनाई। गुरू साहिब जी बालक (गुरू) गोबिन्द राय जी को उनके प्रकाश के लगभग ढाई साल बाद मिले।

गुरू साहिब जी पटना में परिवार के साथ लगभग तीन महीने रहे। फिर गुरू साहिब जी ने यह फैसला किया कि परिवार अभी पटना में ही रहेगा। जब वह चक्क नानकी से परिवार को आने का संदेशा भेजेंगे तब ही वह पंजाब देश आऐंगें।

****

'मद्र देस हमको ले आये'

गुरू साहिब जी ने पटना से पंजाब की वापिसी समय बालक (गुरू) गोबिन्द राय जी ने पिता गुरू जी को कहा कि हमे भी अपने साथ ले चलो, यहां अब दिल नहीं लगता। 'सूरज प्रकाश' ग्रंथ में इतिहासिक बोल हैं, 'नहि इस देस रहन हम भावै। तित ही तुमरे संग सिधावै।' पिता गुरू जी ने लाड करते हुए कहा था, 'चक्क नानकी पहुँच कर हम कुछ समय बाद सारे परिवार को बुला लेंगे। इतने तक आप बड़े भी हो जाओगे' इतिहास के बोल हैं,''इतने महि इह साहिबज़ादा। वधह शरीर ओज होए ज्यादा।'' पंजाब पहुँचने के लिए गुरू साहिब जी ने छोटे रास्ते से जाने की योजना बनाई। उन्होने ज्यादा लम्बे पड़ाव नहीं कियें। पटना से चल कर गुरू साहिब जी 6 महीने में आज के उत्तर प्रदेश से होते हुए दिल्ली पहुँच गये। नवाब सैफ खान दिल्ली जाकर गुरू साहिब जी को मिला, और उनको बहुत सत्कार के साथ चक्क नानकी जी लेकर आया। संगत उनको आगे आ कर लेने के लिए आई। संगत के द्वारा गुरू साहिब जी के पंजाब पहुँचने पर खुशी मनाई गई। संगतें गुरू साहिब जी को सारे पंजाब में से मिलने के लिए आ रही थी। गुरू साहिब जी सब को बहुत आदर दे रहे थे। संगत कथा कीर्तन का आन्नद उठाती और जाते समय गुरू साहिब जी को अपने नगर में चरण रख कर पवित्र करने की विनती करती।

इस तरह दो साल बीत गये। नगर का निर्माण कार्य लगभग हो चुका था। बाहरी रंग रोगन चल रहा था। गुरू साहिब जी मालवे की यात्रा पर जाने की योजना बना रहे थे। इस से पहले वह (गुरू) गोबिन्द राय को पंजाब बुलाना चाहते थे। उन्होंने एक सिख के हाथ परिवार के लिए एक पत्र लिख कर पटना में भेजा, जिस में खास हिदायतें की गई कि जल्दी नहीं करना, लम्बी मंज़िल नहीं करनी ता कि बालक को कोई तकलीफ ना हो। इतिहास अनुसार चिट्ठी के बोल कुछ इस तरह थे:

''लिखी पत्रिका अखिल हवाल। पठ कर चलहो बिलम सब टाल।
आये अपनो नगर संभारह। हम यह जानो तहां सिधारह।''

गुरू तेग बहादर साहिब जी की ओर से आई चिट्ठी की खबर संगत में फैलते देर ना लगी। बाल गोबिन्द (गुरू जी) के कौतुकों के कारण उनके साथ संगत का प्यार इतना पढ़ चुका था कि बिछुड़ना असहनीय था। बाल (गुरू) साहिब जी ने सब को उन की भावना अनुसार युक्तियां बता कर भरोसा दिया कि दर्शन होते रहेंगे। रानी मैणी को कहा कि जब बच्चों को पूरी चने (छोले) खिलाओगे, मैं बीच में बैठ कर खाता दिखाई दूंगा। नवाब रहीम बख्श को कहा – जब वह जपुजी का पाठ करोगे तो मैं पास बैठ कर सुनुंगा। पंडित शिव दत को रोज़ सुबह अमृत वेले दर्शन देने का भरोसा दिया। सारी संगत को वर दिया कि जो भी हरिमन्दर में अमृत वेले हाज़िर हो कर 'आसा की वार' सुनेगा, वह हमारे दर्शन पायेगा। ढाका की संगत की ओर से भेंट की गई सोने की पालकी में बैठ कर माता जी और गुरसिखों के साथ पंजाब की ओर चल पड़े। दाना पुर तक संगत साथ आई। (गुरू) गोबिन्द राय जी के अपने बचन 'कीनी अनिक भांति तन रछा' के अनुसार गुरू पिता जी ने रास्ते के सारे इंतजाम किये हुए थे। फिर भी तैयारी करके श्रद्धावान सिख पहले ही स्वागत के लिए खड़े रहते थे। मार्च 1673 ई. में (गुरू) गोबिन्द राय जी कीरतपुर पहुँच गये। मुखी सिख उनके स्वागत के लिए कीरतपुर पहुँचे हुए थे। वह उनको चक्क नानकी तक ले आए। नगर के बाहर गुरू तेग बहादर जी आप खड़े थे। (गुरू) गोबिन्द राय जी ने नगर में पहला चरण रखने के बाद खड़े होकर गुरू अमरदास जी द्वारा रची बाणी 'आनंद साहिब' की पहली पांच पौड़ियों का पाठ किया। खुश होकर गुरू तेग बहादर साहिब जी ने नगर का नाम ही 'आनंदपुर' रख दिया।

पिता गुरू जी ने बाल गोबिन्द जी की 'भांति भांति की सिछा' देने के प्रबन्ध किया हुआ था। भाई हरजस राय से गुरमुखी सिखाई। संस्कृत की जिम्मेंवारी पंडित किरपा राम को सौंपी गई। फारसी का ज्ञान मुन्शी पीर मुहम्मद ने दिया। घोड़ स्वारी और शस्त्र विद्या देने की सेवा वजीराबाद के बजर सिंह ने आप मांग कर ले ली। इस तरह सारी विद्या का प्रबन्ध करके गुरू साहिब जी ने कुछ समय बाद मालवे के सिखों द्वारा श्रद्धा सहित की गई विनतियों को पूरा करने के लिए मालवा जाना था। इस लिए बहन वीरो को मिलने के लिए मल्ला गांव में गये। वहां उनको विनती करके उनके पांचों पुत्रों को आनंदपुर ले आये। सारी जिम्मेंवारी उनको सौंप कर आप अक्तूबर 1673 ई. को मालवा यात्रा के लिए रवाना हो गये। इस यात्रा का समय तकरीबन एक वर्ष था।

****

'कीनो बडो कलू महि साका'

'बचित्र नाटक' में गुरू गोबिन्द साहिब जी का बचन है,'' साधन हेत इति जिन करी।। सीस दीया पर सी ना उचरी।।'' इस का अर्थ है कि साधू महापुरुषों ने धर्म को बचाने के लिए बिना किसी तकलीफ – दुख – दर्द से अपना सीस बलिदान करके अति (हद) ही कर दी। एक और हद यह भी थी कि जिस हिन्दू धर्म को बचाने के लिए अपना बलिदान किया, यह धर्म उनका अपना धर्म भी नहीं था। वह ना तो तिलक लगाते थे और ना ही जनेऊ पहनते थे। हद तो यह भी थी जब 9 वर्ष के बालक (गुरू) गोबिन्द (सिंघ) जी ने खुद अपने महापुरुष पिता गुरू जी को शहीद होने के लिए भेजा। उन तीन गुरसिखों की तो हद ही थी जब उन्होंने गुरू साहिब जी से पहले हंस हंस कर शहादत स्वीकार की। भाई जैता जी के साहस की भी तो हद थी जिन्होंने जान की प्रवाह ना करते हुए गुरू साहिब जी का सीस आन्नदपुर साहिब पहुँचाया। भाई लख्खी शाह जी की कुर्बानी की भी तो हद ही थी, जिन्होंने अपने धर को आग लगा कर गुरू साहिब जी के धड़ का सस्कार किया। हद तो औरंगज़ेब की क्रुरता की भी थी, उसकी कट्टरता की भी थी। धर्मी तो वह भी पक्का था। नमाज़ी था पांच वक्त का, पर कट्टर इतना कि सूफी और शीया मुसलमानों का भी विरोधी था। उसका हस्त लिखित पंचनामा, जिस को आजकल वसीअत कहा जाता है, उसकी मृत्यु शैया के नीचे से मिला था, यह फारसी में लिखी हुई वसीअत लंडन में इंडिया आफिस लाईबरेरी में पड़ी है, जिसमें उसके द्वारा किये गये पश्चाताप से ही उसके ज़ुल्मों की हद का पता चलता है। पंजाबी में इसका अनुवाद विद्वानों ने इस तरह किया है:

''बुढ़ापा आ गया है। निर्बल हो गया हूँ। हर अंग कमज़ोर हो गया है। अकेला ही आया था। अब अकेला ही जा रहा हूँ। मैं नहीं जानता कि मै कौन हूँ और अब तक क्या करता रहा हूँ। जो समय मैंने नमाज़ में और दुआ में गुज़ारा, उसके इलावा सब व्यर्थ गया। ना मैं साम्रज्य का ठीक तरह प्रबन्ध कर सका, ना ही मैं प्रजा का पालक बना। यह बहुमूल्य जीवन व्यर्थ ही व्यतीत हुआ। मेरा खुदा हर समय मेरे पास था पर मेरी अन्धी आंखें उसका जलवा ना देख सकी। शरीर निढाल हो गया है। अब तो हडिडयां ही रह गई हैं। मैं अपने साथ कुछ भी नहीं लाया था, पर अब पापों का भार लाद कर अपने साथ ले जा रहा हूँ। मुझे मालूम नहीं कि मुझे क्या सज़ा मिलने वाली है, हालांकि मुझे खुदा के रहम की पूरी उम्मीद है, पर अपने कर्मों के कारण मुझे यह चिन्ता छोड़ नहीं रही। जब मैं ही अपने आप से अलग हो रहा हूँ तो दूसरा कौन मेरे साथ रहेगा।

मेरे हाथों से सिली हुई टोपियों की आमदन से बचे हुए चार रुपये दो आने महालदार अल्ला बेग के पास पड़े हैं, उससे लेकर मेरा कफन बनाना।

कुरान पाक की नकलों के साथ कमाए हुए 305 रुपए मेरे बटूए में हैं, यह गरीबों मे बांट देना। इस में से कोई पैसा मेरे कफन–दफन पर खर्च ना करना।'' इस को पढ़ने के बाद उसके जुल्मों के बारे में बताने की ज़रूरत नहीं, पर यह बताने के बाद बात और स्पष्ट हो जाएगी कि उसने अपने शहनशाह पिता को जेल में फेंक कर भूखा–प्यासा मारा। अपने भाई दारा शकोह और मुराद को कत्ल कर दिया। अपनी बहन रोशन आरा और बेटी ज़ैब–उल–निसा को मीठा ज़हर दे कर मार दिया। अपने एक पुत्र को मरवा दिया, दूसरे को देश निकाला दे दिया और तीसरे को परिवार सहित 7 साल बंदी बना कर रखा। ऐसे शहनशाह से आम जनता के बारे में क्या आस की जा सकती है।

अब उस 'अति' की बात करते है जो गुरू तेग बहादर जी ने की। औरंगज़ेब ने अपनी धार्मिक नीति अनुसार सारे हिन्दूओं को मुसलमान बनाना शुरू कर दिया था। फिर उसको ख्याल आया कि यदि मैं उन ब्राह्मणों को मुसलमान बना लूँ जो कि विद्वान हैं और धर्म का प्रचार करते है तो आम जनता को इस्लाम में लाना आसान हो जाएगा। भाई मनी सिंघ जी लिखते हैं ,''एक दिन एस (औरंगज़ेब) विचारआ, इह ब्राह्मण जो हैन, हिन्दूओं को विद्या दिन्दे हैन, अगर इन को दीन विच लै आवां तां सब हिन्दू हीन होये मेरे मजहब में आंवहगे।'' इस विचार के कारण उस ने इफितखार खान को शेर अफगान का खिताब देकर कश्मीर का गर्वनर नियुक्त कर दिया और हिदायत की कि ब्राह्मणों को बहला–फुसला कर, लालच देकर या जुल्म कर के मुसलमान बनाया जाये। उसने मुखी पंडितों को बुला कर इस बारे में फैसला करने के लिए 6 महीने का समय नियत किया।

इन्होंने 500 ब्राह्मणों को एकत्रित किया और यह फैसला किया कि अमरनाथ जा कर भगवान शिव जी के पास प्रार्थना की जाए कि वह अपना तीसरा नेत्र खोल कर हिन्दू धर्म की रक्षा करें। उसी रात उन के मुखी पंडित किरपा राम को शिव जी ने सपने में आ कर दर्शन देकर हुक्म दिया कि आप आनंदपुर में गुरू तेग बहादर जी के पास जाकर हिन्दू धर्म की रक्षा करने और बांह पकड़ने की विनती करो। उसने अपने साथियों को बताया। ब्राह्मणों का एक समूह पंडित किरपा राम जी की अगवाही में पंजाब के लिए चल पड़ा। पहले यह श्री अमृतसर में दरबार साहिब गये। वहां अरदास करके आनंदपुर में गुरू तेग बहादर जी के दरबार में हाजरी लगवाई। गुरू साहिब जी ने उनको प्रशादा पानी छक कर आराम करने और अगले दिन दरबार में हाजिर होने के लिए कहा।

अगले दिन दीवान में दीवान की समाप्ति के बाद गुरू साहिब जी को पंडित किरपा राम ने कश्मीर के गर्वनर का हुक्म और शिव जी के सपने में

हुए हुक्म के बारे में बयान करते हुए हिन्दू धर्म की रक्षा करने की विनती की। आप जी कृपा करके हिन्दुओं की बांह पकड़ो। ''औरंगज़ेब के जुल्मों से हिन्दू धर्म को बचाने के लिए किसी महांपुरुष के बलिदान की ज़रूरत है।'' गुरू साहिब जी अभी यह कह ही रहे थे कि बाल (गुरू) गोबिन्द (सिंघ) जी दरबार में आ गये और पिता गुरू जी से पूछा कि उस्ताद जी के साथ यह भले पुरुष क्यों आये हैं? यह क्या कह रहे है? गुरू साहिब जी ने कहा इन की समस्या बहुत बड़ी है और यह तभी हल हो सकती है यदि कोई महांपुरुष अपना बलिदान दे। (गुरू) गोबिन्द (सिंघ) जी ने एक दम कहा कि पिता जी, आप से बड़ा महापुरुष इस देश में कौन है?

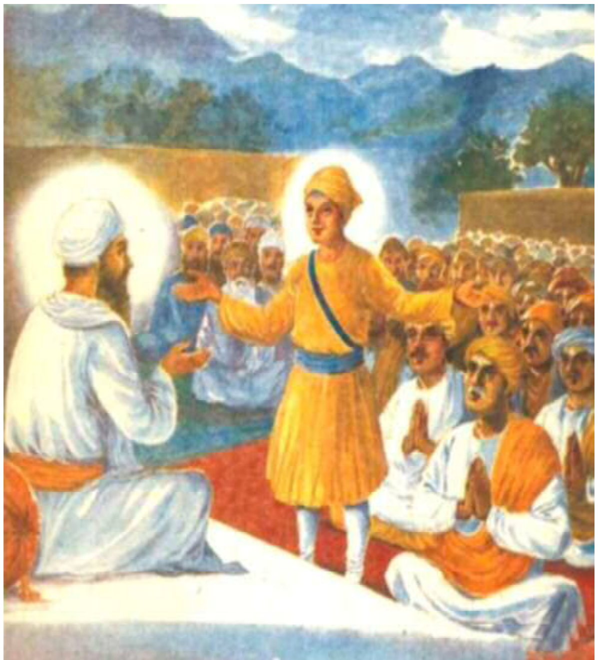

गुरू साहिब जी के चेहरे पर एक दम मुस्कराहट आई और उन्होंने पंडित किरपा राम को कह दिया कि औरंगज़ेब को संदेशा भिजवा दो कि यदि गुरू तेग बहादर जी को मुसलमान बना लेंगे तो हम सभी हिन्दू धर्म छोड़ कर मुसलमान हो जाएंगे। सारे ब्राह्मण खुशी खुशी वापिस गये और शेर अफगान को गुरू साहिब जी का संदेशा दे दिया। उसने यह वार्ता औरंगज़ेब को हसन अबदाल में जा कर सुनाई। यह सुन कर वह बहुत खुश हुआ कि अब तो काम बहुत आसान हो गया, केवल एक को ही इस्लाम में लाना है। उस का सारे देश को मुसलमान धर्म में बदलने का स्वप्न जल्दी ही पूरा होता दिखाई देने लगा।

एक बार पहले भी 1665 ई. में गुरू तेग बहादर जी को गिरफतार किया गया था, क्योंकि औरंगे को लगता था कि उनका उपदेश ''भय काहू को देत नहि भैअ मानत आन'' लोगों को हकूमत के विरुद्ध भड़काने के लिए है। नवाब सैफखान के कहने पर जब दर्शन किये तो तसल्ली हो गई और उनको छोड़ दिया गया था। अब 10 साल बाद फिर उसकी नीति के विरुद्ध ब्राह्मणों की बांह पकड़ना उसको चुभ रहा था पर बहुत सोच विचार कर उनकी गिरफतारी का हुक्म 6 महीने बाद दे ही दिया।

गुरू साहिब जी ने ब्राह्मणों के साथ किये वायदे अनुसार दिल्ली जाने

की तैयारी आरम्भ कर दी। गुरू साहिब जी ने 8 जुलाई 1675 ई. को अमृत वेले के दीवान में बालक गोबिन्द राय जी को पास बुलाया। उनको सत्कार से तख्त पर बैठाया। आप ही उनका कमरकसा किया। गुर–गद्दी देने की साम्रगी मंगवाई। पिता गुरू हरगोबिन्द साहिब जी की ओर से दिये शस्त्र भी खुद पहनाये। पांच पैसे और नारिअल भेंट किया। तीन परिक्रमा करके माथा टेका। भाई राम कुंवर जी, जो बाबा बुड्ढा जी की वंश में से थे, ने तिलक लगाया और माथा टेका। (यह बाद में अमृतपान करके भाई गुरबख्श सिंघ बने।) सारी संगत ने माथा टेक दिया।

दिल्ली जाने से पहले माता नानकी जी, महल (माता) गुजरी जी और गुरसिखों को सारी जिम्मेंवारियां सौंप दी। जाते समय यह भी पता चल गया कि औरंगज़ेब अभी दिल्ली में नहीं है, वह तो हसन अब्दाल (पंजा साहिब) किसी खास प्रयोजन से गया हुआ है। गुरू साहिब जी ने यह समय प्रचार में व्यतीत करने का मन बना लिया। दिल्ली की बजाए आगरा जाने की योजना बनाई क्योंकि औरंगज़ेब की राजधानी अभी आगरे में ही थी। गुरू गोबिन्द सिंघ साहिब जी को आलिंगन में लेकर कहा,"जिस पिता को आप जैसा बालक मिले उसको पारिवारिक कोई चिन्ता नहीं रहती।" बाद में माता जी और महल (माता) गुजरी जी को मिल कर उन्होंने विदाई भी ली और करतार की रज़ा में रहने का उपदेश दिया। गुरू साहिब जी ने पांच सिखों को अपने साथ लिया। यह थे – भाई मती दास जी, भाई सती दास जी, भाई दयाला जी, भाई गुरदिता जी और भाई ऊदा जी।

आनंदपुर से चल कर गुरू साहिब जी नवाब सैफ खान के पास पहुँच गये। यहां से आगे पटियाला, समाणा पहुँचे। यहां पठानों की गढ़ी में निवास किया। कुछ दिन यहां विश्राम करके पेहोवा, जींद और रोहतक के रास्ते आगरे पहुँच गये। यहां एक बाग में डेरा किया। गुरू साहिब जी माई जस्सी के घर उसकी इच्छा पूरी करने के लिए गये। यहां ही एक चरवाहे की गरीबी काटने की वार्ता इतिहास में दर्ज है। बाग के नज़दीक एक चरवाहा सैयद अली भेड़ें चरा रहा था। गुरू साहिब जी ने उसको बुला कर एक हीरे जड़ी अंगूठी और एक दुशाला देकर कहा कि हमें हलवाई की दुकान से मिठाई ला दो। हलवाई ने शक करके कोतवाल के पास उसकी शिकायत कर दी। चरवाहे के माध्यम से कोतवाल ने गुरू साहिब जी, भाई मती दास जी, भाई सती दास जी और भाई दयाला जी को गिरफतार कर लिया। गुरू साहिब जी ने सरकार की तरफ से रखा ईनाम उस चरवाहे को दिलवा कर उसकी गरीबी दूर कर दी। गुरू साहिब जी ने नीति का प्रयोग करके गुरदिता जी और भाई ऊदा जी को हालात पर नज़र रखने के दिल्ली रवाना कर दिया।

गुरू साहिब जी और साथियों को आगरे से दिल्ली पहुँचाया गया। उन्हें एक पुरानी और उजाड़ हवेली में रखा गया। अगले दिन गुरू साहिब जी को इस सुनसान हवेली से कोतवाली ले जाया गया और पिंजरे में बंद करके रखा

गया। तीनो सिखों को भी पेश किया गया। औरंगज़ेब के हुक्मानुसार गुरू साहिब जी को तीन रास्तों में से कोई एक चुनने को कहा गया। एक रास्ता तो शाही ठाठ वाली ज़िन्दगी का था जो कि इसलाम कबूल करने के बाद मिलनी थी। दूसरा रास्ता करामात दिखा कर राम राय की तरह जागीरें लेने का था। तीसरा रास्ता था – मौत। गुरू साहिब जी मुस्करा कर बोले,'' अपने दीन को छोड़ना मंजूर नही। करामात नाम है कहर का, यह भी कबूल नहीं। मौत का हमें कोई भय नही, जब मर्ज़ी दे दो।'' कई बार दोहराने के बाद गुरू साहिब जी के इन्कार करने पर यातनाएं देनी शुरू कर दी। भूखा रखा गया। पिंजरा ऐसे ले कर आए, जिस में केवल खड़ा ही हुआ जा सके, अगर थोड़ा सा भी हिलते थे तो पिंजरे में लगी हुई कीलें शरीर को छील देती। जब दिल्ली की संगत और धनवान व्यापारियों को यह पता चला कि गुरू साहिब जी को कष्ट दिये जा रहे हैं तो उन्होंने काज़ी वहाब अली को एक करोड़ रुपये लेकर गुरू साहिब जी को छोडने और राजे को यह कहने के लिए मना लिया कि गुरू करामात करके पिंजरे में से गायब हो गया। रकम भी इकट्ठी कर ली गई, पर गुरू साहिब जी ने सिखों पर नाज़ करते हुए कहा कि तुम्हारी श्रद्धा को नमस्कार है पर यह सब गुरू नानक साहिब जी की सिखी के विरुद्ध है।

भाई मती दास जी ने गुरू साहिब जी को कहा कि आप आज्ञा दो तो दिल्ली को भस्म कर दूँ। गुरू साहिब जी ने ताड़ना करते हुए कहा,''यह शक्ति कहां से ली।'' भाई साहिब जी का जवाब था,'' गुरू की बाणी और गुरू की सेवा से।'' गुरू साहिब जी ने समझाया,''सदा परमात्मा की रज़ा में राज़ी रहना है। जिस समुद्र में से दो बून्दें ले कर यह शक्ति आई है, उस समुद्र के बहाव से सदा डर कर रहना है।'' जब गुरू साहिब जी नहीं माने तो इनके सिखों पर भी यही जाल बिछाया गया। दीन में आ कर शाही महलों, हूरों और सुखों का चोगा फैंका गया क्योंकि पहरेदारों से औरंगे तक यह बात पहुँच चुकी थी कि सिख भी करामाती हैं, पर गुरू साहिब जी ने उनको ऐसा करने से मना कर दिया। अहलकारों ने भी उनको तोड़ने और करामात दिखाने के लिए मनाने की पूरी कोशिश की। उनको अत्याधिक यातनाएं दे कर मौत का भय दिया गया। जब उन पर कोई असर ना हुआ तो भाई मती दास जी को आरे के साथ चीरने का हुक्म सुनाया गया। उन्होंने हंस कर मौत कबूल की और शर्त रखी कि आरा चलाते समय मेरा मुँह गुरू साहिब जी की तरफ कर देना। वह तो पहले से ही यह सोच कर बैठे थे कि उसको मौत की सज़ा गुरू के सामने दी जाएगी ता कि उनके मन में भय उपजे। दिल्ली में मुनादी कराई गई कि कल चांदनी चौक में गुरू के सिखों को सब के सामने भयानक मौत की सजा दी जाएगी।

अगले दिन चांदनी चौंक में लोग तमाशा देखने पहुँच गये। गुरू साहिब जी के सिख भाई ऊदा जी, भाई गुरदिता जी, भाई नानू जी और कई अन्य सिख भी मुस्लिम वेश में अनहोनी होते देख कर वाहेगुरू मंत्र का जाप कर रहे थे। जल्लाद बुलाए गये। फट्टे और आरा भी आ गया। गुरू तेग बहादर साहिब जी के पिंजरे के सामने भाई मती दास जी को लाया गया। हुक्म देने वाले काज़ी और कोतवाल सब हाजिर हो गये। भाई मती दास जी को फट्टों के बीच में बांधा गया। गुरू साहिब जी और भाई मती दास जी के सामने आखिरी बार तीनो बचन दोहराये गये। उनका जवाब बिना डर भय के हमेशा की तरह वही था। उस दिन चांदनी चौंक में हाजिर सब लोगो के चेहरों पर भय था। गुरू साहिब जी और भाई मती दास जी शांत और अडोल थे। काजी और कोतवाल, गुरू और गुरसिख की अपने धर्म के प्रति दृढ़ता को देख हैरान थे। आखिर काजी ने कोतवाल को और कोतवाल ने जल्लादों को आरा चलाने का हुक्म दिया। गुरू साहिब जी और भाई मती दास जी ने जपुजी साहिब का पाठ आरम्भ किया। सिर पर आरा चलता, खून गिरता और बिना दर्द वाली ऊँची आवाज़ में पाठ होता देख कर कई कमज़ोर दिल वाले तो खिसक ही गयें कुछ ही समय मे भाई मती दास जी के शरीर के दो टुकड़े हो गये। काजी, कोतवाल सहित सभी हैरान थे कि शरीर के दोनों टुकड़ों मे से पाठ की आवाज़ आ रही थी,'' जिनी नाम धिआइआ गये मसकत घाल।। नानक ते मुख उजले केती छुटी नाल।।''

अगले दिन इसी तरह लोगों की भीड़ में भाई दयाला जी को गुरू साहिब जी के सामने देग में उबाला गया। भाई दयाला जी भाई मनी सिंघ जी के सगे भाई थे। वह भाई मनी सिंघ जी से बड़े थे। गुरू तेग बहादर साहिब जी के बहुत प्यारे सिख थे। गुरू साहिब जी उनको हमेशा भाई जी कह कर बुलाया करते थे। गुरू साहिब जी के द्वारा पटने की संगत के नाम जारी किये गये हुकमनामों में भाई दयाल दास जी का नाम आता है जिसमें संगत को

हुक्म दिया गया था कि भाई दयाल दास जी का कही बात को हमारा ही हुक्म समझना। शहीदी से पहले उनके द्वारा की गई अरदास को सुन कर काजी, कोतवाल और सभी लोग हैरान थे और ऐसे प्रतीत हो रहा था कि गुरू जोत के कुछ अंश उनमें विद्यमान थे। वह अरदास कर रहे थे,''हे गुरू अरजन देव जी, एक समय आप चन्दू और जहांगीर की देग में उबाले गये थे, आज आप जी औरंगज़ेब की देग में उबलते सिख की लाज रखो जी''। वहां हाज़िर सभी लोगों को लपटें मारती आग के ऊपर उबलते

देगे में से '੧ੳ से लेकर केती छुट्टी नाल' तक आती आवाज़ सुनाई देती रही। उसके बाद आग और आवाज़ दोनों शांत हो गई।

अगले दिन भाई सती दास जी को ले आये। गुरू साहिब जी के सामने रूई में लपेट कर आग लगा दी गई। कोतवाल और काजियों की ओर से रूई में लपेटने की सज़ा यह सोच कर दी गई कि वह गुरू नानक का मंत्र जपुजी पूरा ने कर सके और उसको दर्द महसूस हो क्योंकि रूई तो बहुत जल्दी आग पकड़ लेगी, साथ ही सती दास को भी जला देगी। काज़ी का विचार था कि जब वह गुरू जी द्वारा दिये मंत्र को पढ़ते हैं तो उनको कोई तकलीफ नहीं होती। वह तो दर्द के साथ तड़पते और चीखें मारते सिख को देखना चाहते थे। पर वह यहां भी असफल हुए क्योंकि जल्लाद से भाई सती दास के चारों तरफ बहुत ज्यादा रूई लपेटी गई थी ता कि शरीर पूरी तरह भस्म हो जाये। ना ही काज़ी, ना ही कोतवाल और ना ही जल्लाद के मन में यह ख्याल आया कि पहले तो रूई की बाहरी परत को आग लगेगी। जब तक भाई सती दास के शरीर को अग्नि जलाती, वह अपना पाठ पूरा कर चुके थे। भाई मती दास जी और भाई सती दास जी दोनो सगे भाई थे। यह भाई पिरागा जी के पोते थे, जो गुरू अरजन साहिब जी के समय सिखी में आये थे। गुरू अरजन साहिब जी ने उनको भाई का खिताब बख्शा, जो उनके खानदान में चलता रहा। गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने भाई पिरागा जी को अपनी फौज के एक जत्थे की कमांड भी सौंपी हुई थी। उनके बाद उनके पुत्र भाई

हीरा नन्द जी गुरू हरि राय साहिब जी के समय सेवा करते रहे। उनके बाद यह दोनो भाई गुरू हरिकृशन साहिब जी के साथ दिल्ली भी गये। गुरू हरिकृशन साहिब जी के दीवान भाई दरगाह मल जी उनके चाचा जी थे। शहीद का दर्जा ही सिखी की 'हद' है जो बाणी और सेवा से प्राप्त होता है, और युगों युगों तक कायम रहता है।

इन तीनों सिखों के अडोल शहीदी और गुरू साहिब जी की शांत अवस्था की खबर जब औरंगे तक पहुँची तो उस का हुक्म भी आ गया कि किसी भी तरह गुरू को इस्लाम में लाया जाये। कोई भी तरीका अपनाया जाये। डरावा दिया जाये। छल कपट किया जाये। गुरू साहिब जी की शहीदी के बाद वाला तूफान किसी ना किसी रूप में आता उसको साफ दिखाई दे रहा था। पूरे देश में इस्लामी करण का स्वप्न असफल होता प्रतीत हो रहा था। मुख्य काज़ी अब्दुल वहाब वोहरा को गुरू साहिब जी को मुसलमाल बनाने की जिम्मेंवारी सौंपी गई । एक पूरा दिन उसने अपना पूरा ज़ोर लगा कर गुरू साहिब जी को इस्लाम कबूल करने को कहा, पर उसको काई सफलता नही। मिली। बल्कि गुरू साहिब जी ने बहुत शांत और नम्रता भरे शब्दों में समझाया कि अल्लाह को भूल कर तुम भी अत्याचारी शहनशाह का आदेश मान कर पाप के भागी बन रहे हो। बल पूर्वक किसी को अपने धर्म में लाना अल्लाह–पाक को नहीं भाता। इस बात से चिड़ कर उसने दो टूक बात की,''कलमा पढ़ो या करमात दिखाओ या मरना कबूल करो।'' गुरू साहिब जी ने फिर वही शब्द दोहराये,'' धर्म त्यागना प्रवान नहीं। करामात कहर का दूसरा नाम है जो हम नहीं कर सकते, केवल शहीदी ही प्रवान है।'' काज़ी ने सिर धड़ से अलग करने का फतवा (हुक्म) सुना दिया।

शहर में मुनादी करवा दी गई। चौक में एक ऊँचा थड़ा तैयार करवाया गया। जल्लाद जलाल – उद–दीन ने तलवार तेज़ कर ली। दूसरी तरफ दिल वाली मुहल्ले में भाई जैता जी के घर भाई नानू जी , भाई ऊदा जी, भाई गुरदिता जी, भाई लखी शाह, भाई निगाहिया जी और कई अन्य सिख इकट्ठे होकर विचार की कि किसी भी हालत में गुरू साहिब जी के सीस और धड़ की बेअदबी नहीं होने देनी। पूरी योजना बना कर इसकी सफलता की अरदास की गई और तैयारी में जुट गये। अपनी अपनी जिम्मेंवारियां संभाल ली गई।

11 नवम्बर, **1675** ई. को गुरू साहिब जी को पिंजरे से बाहर निकाला गया। पहरे और बढ़ा दिए गये। गुरू साहिब जी ने कोतवाली में बनी खूही (छोटा कुआँ) में स्नान किया। खूही के नज़दीक बैठ कर जपुजी साहिब का पाठ किया। दोपहर के बाद गुरू साहिब जी को बाहर निकाला गया। हजारों की संख्या में लोग पहुँचे हुए थे। गुरसिख वेश बदल कर अपनी अपनी

जिम्मेंवारी निभाने के लिए तैयार खड़े थे। आसमान सतारवीं सदी के महान साके को देखने से इन्कारी हो रहा था। आकाश में धूल का एक बादल छाने लगा। रोशनी कम होती जा रही थी। जल्दी से काज़ी ने आ कर गुरू साहिब जी के समक्ष वही शर्ते दोहराई। गुरू साहिब जी ने भी अपना फैसला सुनाया,''केवल शहीदी ही प्रवान है।'' काज़ी ने जल्लाद को इशारा किया। उसने तलवार के वार से गुरू साहिब जी का सीस घड़ से अलग करके 'साका वरता' दिया। 'कलू' में 'साका' वरतदे (घटित होते) ही सब ने अपनी अपनी लगी हुई ज़िम्मेंवारी संभाल ली। आसमान से ऐसी धूल भरी आंधी उठी, मानो धरती हिल रही हो। काज़ी, कोतवाल, पहरेदार और जल्लाद सभी आंखें मलते अन्दर भाग गये। भाई जैता जी ने भाई नानू जी की सहायता से गुरू साहिब जी का सीस संभाल लिया। एक स्वच्छ कपड़े में लपेट लिया। अफरा–तफरी मचने के कारण वह भीड़ से दूर चले गये। गुरू साहिब जी के धड़ को संभालने के लिए भाई लखी शाह बंजारा द्वारा बनाई योजनानुसार अपना रूई से भरे गड्डों का टांडा लेकर तैयार था। (उस समय के टांडे को आज की Transport कह सकते हैं। भाई लखी शाह के पास उस समय 10000 गड्डों का टांडा था) उस दिन उन्होंने 100 गड्डे तैयार किये हुए थे। चांदनी चौक में उस टांडे में वह खुद और उनको बेटा भाई नगाहिया भी एक गड्डे में स्वार थे। चौंक पार करते समय अगले गड्डे स्कीम अनुसार कुछ पलों के लिए रुके। बस उसी समय में ही उन दोंनो ने गुरू साहिब जी का पावन घड़ उठा कर एक चादर में लपेट लिया और रूई के गड्डे में बिराजमान करके उसके ऊपर और रूई डाल कर ले गये। उसी रात राय सीना गांव में जा कर अपने घर में गुरू साहिब जी का पावन शरीर एक पलंघ पर बिराजमान करके अपने घर को आग लगा दी। इस तरह उन्होंने गुरू साहिब जी के पावन शरीर के संस्कार किया। इस स्थान पर आजकल गुरूद्वारा रकाब गंज साहिब बना हुआ है।

दूसरी ओर भाई जैता जी – भाई नानू जी और भाई अड्डा जी की

सहायता से गुरू साहिब जी के पावन सीस को स्वच्छ जल के साथ साफ किया। तीन कपड़ों में लपेट कर एक टोकरी मे कपड़ा बिछा कर बिराजमान कर दिया। फिर उसके ऊपर एक और कपड़ा डाल कर ढक दिया। भाई जैता जी वह टोकरी अपने सिर पर उठा कर आनंदपुर साहिब की ओर चल पड़े। वह तीनो सिख इकट्ठे नहीं चल रहे थे। भाई नानू जी कुछ दूरी पर आगे थे और भाई अड्डा जी कुछ दूरी पर पीछे थे। योजनानुसार सारे रास्ते वह तीनों आपस में नहीं मिले। पर रुक रुक कर एक दूसरे को देखते रहे। पांचवें दिन कीरतपुर साहिब पहुँच कर ही वह मिले। रास्ते में चार पड़ाव किए। पहला – बाग पट, दूसरा – तरावड़ी, तीसरा – सब्जी मंडी, अंबाला, चौथा – नाभा साहिब। कीरतपुर इस लिए रुके कि शायद गुरू साहिब जी के सीस का संस्कार यहां करना हो क्योंकि गुरू हरगोबिन्द साहिब जी और गुरू हरि राय साहिब जी का अंगीठा साहिब कीरतपुर में ही है। भाई अड्डा जी यह संदेशा लेकर आन्नदपुर साहिब गये। दशमेश पिता जी ने सीस का संस्कार आन्नदपुर साहिब में करने के फैसला किया। संगत कीरतपुर पहुँची और कीर्तन करते हुए पावन सीस को एक पालकी में बिराजमान करके आनंदपुर साहिब ले कर आए। माता गुजरी जी ने जब गुरू पति के सीस के दर्शन किये तो अडोल रह कर नमस्कार किया और फुरमाया,''तुम्हारी निभ गई, मेरी भी निभ आए।'' गुरू गोबिन्द साहिब जी ने नमस्कार करके सीस को गोद में ले लिया। गुरसिखों समेत मिल कर गुलाब जल के साथ पिता गुरू जी के पावन मुखड़े को साफ किया। चन्दन की चिखा तैयार की गई। संस्कार करने के बाद गुरू साहिब जी ने संगत को सम्बोधन किया,'' मन हल्का करने की ज़रूरत नहीं, बड़े गुरू– गुरू अरजन देव जी फुरमा गये हैं कि महापुरुष लोगों को 'जीवन दान' दे कर 'भक्ति' के साथ जोड़ने के लिए अवतरित होते हैं। गुरू तेग बहादर जी अपने सीस का बलिदान दे कर सारे संसार को जीवन दान दे गये हैं।''

भाई जैता जी को ''रंघरेटे – गुरू के बेटे'' कह कर आलिंगन किया। भाई नानू जी और भाई अड्डा जी को भी बहुत प्यार दिया।

****